बोध मञ्जरी

अखंड
परमधाम
अखंड
जमुना
अखंड
अक्षरधाम
सत्स्वरूप ब्रह्म
केवल ब्रह्म
सबलिक ब्रह्म
(अखंडव्रज-रासलीला)
अव्याकृत ब्रह्म

आदिनारायण
(महाविष्णु)
(महाप्रलय)
(महाप्रलय)
महतत्व
गायत्री शक्ति
ऊँकार प्रणवब्रह्म
(प्राकृतप्रलय)
(प्राकृतप्रलय)
सतलोक
(ब्रह्मापुरी, वैकुंठ, कैलास)
तपलोक
जनलोक
महलोक
नैमितिकप्रलय स्वर्गलोक नैमितिकप्रलय
भूवलोक
(नित्यप्रलय) मृत्युलोक (नित्यप्रलय)
अतललोक
वितललोक
सुतललोक
तलातललोक
महातललोक
रसातललोक
पाताललोक

बोध मञ्जरी

लेखक

श्री राजन स्वामी

प्रकाशक

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड़ रोड, सरसावा, सहारनपुर, उ.प्र.

www.spjin.org

सर्वाधिकार सुरक्षित

© २०१०, श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट

पी.डी.एफ. संस्करण – २०१९

प्राक्कथन

प्रथम लागूं दोऊ चरण को, धनी ए न छुड़ाइयो खिन।

लांक तली लाल एड़ियां, मेरे जीव के एही जीवन।।

सच्चिदानन्द परब्रह्म के प्रति अटूट निष्ठा रखने वाले आत्मीय जनों! प्रेम, शान्ति, एवं आनन्द की खोज चैतन्य का स्वाभाविक गुण है, किन्तु मत–मतान्तरों की झिक–झिक के कारण वास्तविक सत्य का मार्ग नहीं मिल पाता, जिससे मानव समाज अन्धकार में भटकने के लिये मजबूर हो जाता है।

परम सत्य की अनुभूति ही जीवन का चरम लक्ष्य होना चाहिए। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर इस "बोध मञ्जरी" नामक लघु ग्रन्थ की रचना की गयी है। मुझ जैसे अल्पज्ञ के लिये यह कार्य नितान्त कठिन था, किन्तु मेरे

सदगुरू परमहंस महाराज श्री रामरतन दास जी एवं धर्मवीर जागनी रत्न सरकार श्री जगदीश चन्द्र जी की कृपा दृष्टि से सुगमतापूर्वक सम्पन्न हो गया , जिसका प्रतिफल आपके कर–कमलों में प्रस्तुत है।

मैं आशा करता हूँ कि यह ग्रन्थ पाठकजनों को प्रिय हो सकेगा। जाने–अनजाने होने वाली त्रुटियों को सूचित करने का कष्ट करें, ताकि भविष्य में उसे सुधारा जा सके।

आपका

राजन स्वामी

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

सरसावा (उ.प्र.)

अनुक्रमणिका

1	वर्तमान समय में विश्व का सामाजिक परिवेश	8
2	ब्रह्मज्ञान की आवश्यकता क्यों?	11
3	अध्यात्म जगत के मूल प्रश्न	16
4	कहाँ है और कैसा है परब्रह्म?	18
5	तीन पुरुष और उनकी लीला	30
6	स्वलीला अद्वैत परब्रह्म	37
7	प्रेम, शान्ति, और आनन्द का मूल कहाँ है?	43
8	हमारे जीवन का मूल लक्ष्य	47
9	साम्प्रदायिक मतभेदों के बीच क्या करें	53
10	मूल प्रश्नों का समाधान	57

11	एकमात्र उपास्य कौन?	63
12	भक्ति का मार्ग कैसा हो?	73
13	अवतार एवं परब्रह्म के प्रगटन की समीक्षा	81
14	परमधाम का प्रेम–विवाद (इश्क–रब्द)	85
15	व्रज एवं रास लीला	96
16	त्रिधा लीला	102
17	धर्मग्रन्थों की भविष्यवाणियाँ	111
18	सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी का प्रगटन	128
19	श्री महामति जी का प्रगटन	131
20	परब्रह्म के रूप में शोभा	134
21	जागनी अभियान	137
22	वेद–कतेब का एकीकरण	142

23	हरिद्वार का शास्त्रार्थ	151
24	ब्रह्ममुनियों की पद्धति	157
25	औरंगज़ेब को जाग्रत करने का प्रयास	162
26	कियामत के सात निशान	166
27	श्री पन्ना जी की बीतक	173
28	निजानन्द दर्शन की विशेषताएँ	177
29	साम्प्रदायिक सौहार्द के लिये क्या करें?	180
30	विश्व को निजानन्द दर्शन की देन	184

१. वर्तमान समय में विश्व का सामाजिक परिवेश

वैज्ञानिक अविष्कारों की चकाचौंध में आज सारा विश्व हतप्रभ है। विज्ञान के बल पर आज कुछ घण्टों में हजारों किलोमीटर की यात्रा तय की जा सकती है, तो कुछ मिनटों में ही कोई भी सूचना सम्पूर्ण विश्व में फैलायी जा सकती है। मनोरंजन के साधनों की अधिकता के बारे में तो कुछ कहने में भी झिझक होती है। इतना ही नहीं, आज का मानव अनेक ग्रहों–उपग्रहों पर भी अपनी उपस्थिति दर्शा चुका है।

किन्तु इसका दूसरा पक्ष भी है। भौतिक सुख साधनों के संग्रह की होड़ ने मानवीय प्रेम के नाम पर कालिख पोत दी है। अर्थ की अपेक्षा आत्मिक सम्बन्धों

का महत्व आज नगण्य हो गया है। आतंकवाद की ज्वाला से जहाँ सम्पूर्ण विश्व झुलस रहा है, वहाँ वर्गवाद, नस्लवाद, एवं संकीर्णता की आँधी विनाश की लपटों को और तेज कर रही है।

सत्ता और सुख के लालच ने धर्म के मूल स्वरूप को विकृत कर साम्प्रदायिक रूप दे दिया है। भिन्न–भिन्न मत–मतान्तरों ने जो विद्वेष की अग्नि फैला रखी है, वह परब्रह्म की कृपा रूपी वर्षा के बिना बुझ नहीं सकती। प्रश्न यह है कि शाश्वत सुख और शान्ति के लिये तड़पने वाला मानव आज क्या करे? चिरन्तन सत्य की किरण उसे कहाँ मिले? वह कैसे सम्पूर्ण प्राणिमात्र को विनाश की गर्त से निकालकर प्रेम और आनन्द के रस से सिंचित करे? निर्विवाद रूप से यह आकांक्षा उसे "निजानन्द" के दार्शनिक तथ्यों को अंगीकार करने के लिये प्रेरित

करेगी, लेकिन इसके साथ ही शुद्ध एवं निष्पक्ष हृदय भी चाहिये, जिसमें सत्य को ग्रहण करने वाली अनबुझी प्यास हो।

❖❖❖❖❖

२. ब्रह्मज्ञान की आवश्यकता क्यों?

शाश्वत सुख एवं शान्ति की चाहना मानव के लिये स्वाभाविक है। इस लक्ष्य को पाने के लिये ही वह भौतिक सुखों की मृग–तृष्णा का शिकार होता है। जिस तरह से अग्नि में घी डालने पर वह बुझती तो नहीं है बल्कि उसकी लपटें और तेज होती जाती हैं , उसी प्रकार इच्छाओं के भोग से इच्छायें और बढ़ती जाती हैं कदापि शान्त नहीं होतीं।

भर्तृहरि का कथन है कि सम्पूर्ण चेहरा झुर्रियों से भरा हुआ है, सिर के बाल सफेद हो गये हैं, शरीर के सभी अंग शिथिल हो गये हैं, किन्तु कितना बड़ा आश्चर्य है कि तृष्णा पल–पल बढ़ती ही जा रही है।

राजा ययाति ने अपने पुत्र पुरु की युवावस्था लेकर लम्बे समय तक विषयों का भोग किया, किन्तु उन्हें शान्ति नहीं मिली। इसी प्रकार सौभरि ऋषि ने भी तप करना छोड़कर मानधाता की पुत्रियों से विवाह कर लौकिक सुख भोगा, किन्तु पश्चाताप के सिवाय उन्हें कुछ भी नहीं मिला। सांख्य दर्शन में इसीलिये कहा गया है कि विषयों के भोग से सौभरि ऋषि के समान कभी भी शान्ति प्राप्त नहीं होती। इन्द्रियों के भोग इन्द्रियों के तेज को नष्ट तो कर देते हैं, किन्तु चित्त की वासना में बढ़ोत्तरी ही होती है। लखनऊ का नवाब वाजिद अली शाह ३६५ बेगमें रखकर भी कभी शान्ति प्राप्त नहीं कर सका था।

शाश्वत सुख तथा शान्ति की प्राप्ति के लिये उपनिषदों ने एक ही रास्ता बताया है कि प्रेम और

आनन्द के अनन्त सागर उस परब्रह्म को हम आत्मस्थ होकर साक्षात्कार करें।

किन्तु जब तक परब्रह्म के धाम, स्वरूप, लीला, एवं निज स्वरूप का उचित बोध न हो, तब तक आत्म–साक्षात्कार या ब्रह्म–साक्षात्कार की प्रक्रिया सम्पादित नहीं की जा सकती। सांख्य दर्शन का तो यहाँ तक कथन है कि जिस प्रकार सर्प द्वारा हाथ में डसे जाने पर हाथ के उस भाग को काटकर विष निकाला जाता है, उसी प्रकार विषयों से पूर्ण निवृत्त हुए बिना कभी भी सुख – शान्ति को पाया नहीं जा सकता। इसी तरह, जिस प्रकार सर्प केंचुली को छोड़कर ही शान्ति प्राप्त कर पाता है , उसी प्रकार लौकिक सुखों का मोह छोड़ने के पश्चात् ही अखण्ड शान्ति को पाया जा सकता है।

इसी लक्ष्य को पाने के लिये वेदान्त ने श्रवण

(ब्रह्मज्ञान का श्रवण), मनन, तथा निदिध्यासन अर्थात् ध्यान द्वारा साक्षात्कार का मार्ग बताया है।

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि यदि हम अखण्ड सुख एवं शान्ति को पाना चाहते हैं, तो हमें ब्रह्मज्ञान की शरण में जाना ही पड़ेगा, क्योंकि दर्शन शास्त्र में भी कहा गया है कि जब तक परब्रह्म का शुद्ध ज्ञान नहीं होता, तब तक अखण्ड मुक्ति नहीं होती और अज्ञानता के कारण ही संसार बन्धन होता है।

❖❖❖❖❖

न जातु काम: कामानामुपभोगेन उपशाम्यति।

वर्धते हविषा कृष्णवर्तमेव भूय एव अभिवर्धते।।

मनुस्मृति २/९४

वलिभि: मुखामाक्रान्तं पलितै: अंकितं शिर:।

गात्राणि शिथिलायन्ते तृष्णैका तरूणायते।।

भर्तृहरि शतक श्लोक ८

न भोगाद् राग शान्ति: मुनिवत्। सांख्य ४/२७

तमात्मस्थं ये अनुपश्यन्ति धीरा: तेषाम् सुखं शाश्वतं नेतरेषाम्।

तमात्मस्थं ये अनुपश्यनित धीरा: तेषाम् शान्ति: शाश्वती न एतरेषाम्।

कठोपनिषद २/५/१२,१३

छिन्न हस्तवत् वा। सांख्य ४७

अहिर्निर्ल्वयिनीवत्। सांख्य ४६

ऋते ज्ञानान्न मुक्ति:। बन्धो विपर्ययात्। सांख्य

३. अध्यात्म जगत के मूल प्रश्न

लाखों योनियों में भटकने वाले जीव को जब भक्ति के संस्कारवश विवेक–चक्षु प्राप्त होते हैं, तो वह सोचता है कि यह कैसा संसार है जिसमें मैं लाखों जन्मों से भटक रहा हूँ। मेरा निज स्वरूप क्या है? शरीर, अन्त:करण, और प्राणों से रहित मेरा शुद्ध स्वरूप क्या है? मेरा अखण्ड घर कहाँ है? असंख्य ब्रह्माण्डों को अपनी सत्ता के स्वरूप से एक पल में बनाने वाला और लय करने वाला वह परब्रह्म कहाँ है और कैसा है? उसकी लीला कैसी है? उसको प्राप्त करने का मार्ग कौन सा है?

अनादि काल से सृष्टि की उत्पत्ति एवं प्रलय का यह

चक्र चलता आ रहा है और चलता रहेगा। प्रत्येक सृष्टि के मनीषीजन उपरोक्त प्रश्नों के समाधान के लिये प्रयत्नशील रहे हैं।

इन प्रश्नों का यथावत समाधान परब्रह्म की कृपा बिना कोई भी नहीं कर सकता, भले ही वह बुद्धि का सागर ही क्यों न कहा जाता हो।

आध्यात्मिक ज्ञान का प्रारम्भ इन प्रश्नों की जिज्ञासा से शुरु होता है और समापन इनके समाधान से होता है। संसार के सभी धर्मग्रन्थ इन प्रश्नों के समाधान में ही प्रयुक्त होते हैं, किन्तु कोई विरला ही वह भाग्यशाली व्यक्ति होता है, जो धर्मग्रन्थों की अनमोल मणियों को परब्रह्म की कृपा से एक सूत्र में पिरोकर इन प्रश्नों का यथावत समाधान खोजता है।

४. कहाँ है और कैसा है परब्रह्म?

सम्पूर्ण अध्यात्म जगत परब्रह्म को सर्वज्ञ और अखण्ड मानता है और यह वास्तविकता भी है, किन्तु सर्वज्ञ और अखण्ड सिद्ध करने के लिये परब्रह्म को इस सृष्टि के कण–कण में व्यापक तथा सूक्ष्म से सूक्ष्म मानना पड़ता है, यहीं से निराकारवाद का सिद्धान्त लागू हो जाता है।

इस मायावी सृष्टि के कण–कण में सच्चिदानन्द परब्रह्म के सर्वव्यापक मानने पर ये प्रश्न उपस्थित होते हैं–

१. यह सम्पूर्ण जड़ जगत चेतन , अखण्ड, और अविनाशी होना चाहिए।

२. इस जगत के कण–कण से लौह अग्निवत ब्रह्मरूपता की झलक मिलनी चाहिये।

३. प्रत्येक प्राणी पूर्ण ज्ञानवान होना चाहिए। न तो धर्मशास्त्रों की आवश्यकता होनी चाहिए और न पढ़ने–पढ़ाने की।

४. प्रत्येक प्राणी तथा प्रत्येक कण आनन्द से परिपूर्ण होना चाहिये, जबकि व्यवहार में तो यही दिखता है कि प्रत्येक प्राणी किसी न किसी रूप में दुःखी है।

५. स्वर्ग, वैकुण्ठ, तथा नर्क में किसी भी प्रकार का अन्तर नहीं होना चाहिए, क्योंकि ब्रह्म अखण्ड और एकरस है।

६. किसी भी प्राणी के अन्दर काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि दुर्गुण नहीं होना चाहिए।

७. अविनाशी परब्रह्म के कण–कण में व्यापक होने पर इस दुनिया में जन्म तथा मृत्यु का चक्र नहीं चलना चाहिये।

८. मल–मूत्र जैसी वस्तुओं से भी हमें घृणा के स्थान पर ब्रह्मरूपता की अनुभूति होनी चाहिए।

९. जगत के ब्रह्मरूप होने पर भक्ति और मुक्ति जैसे शब्दों की आवश्यकता भी नहीं होनी चाहिये।

१०. ब्रह्मरूपता वाली सृष्टि में जगत की उत्पत्ति एवं प्रलय की बात मात्र काल्पनिक होनी चाहिये।

जिस प्रकार अन्धेरे के कण–कण में सूर्य व्यापक नहीं हो सकता, उसी प्रकार इस मायावी जगत के कण–कण में सच्चिदानन्द परब्रह्म का वह अखण्ड प्रकाशमान (नूरमयी) स्वरूप व्यापक नहीं हो सकता। इस जगत के

कण–कण में उसकी सत्ता अवश्य है, किन्तु स्वरूप नहीं।

परब्रह्म सर्वव्यापक अवश्य है, किन्तु अपने निजधाम में, जहाँ के कण–कण में अनन्त सूर्यों का प्रकाश है, जहाँ अनन्त आनन्द है। इस प्रकार का वर्णन ऋग्वेद में किया गया है। गीता में भी कहा गया है कि उस ब्रह्मधाम में न तो सूर्य प्रकाशित होता है, न चन्द्रमा, और न ही अग्नि। जहाँ जाने पर पुन: लौटना नहीं पड़ता, वह मेरा परमधाम है। यजुर्वेद का कथन है कि प्रकृति के अन्धकार से सर्वथा परे सूर्य के समान प्रकाशमान स्वरूप वाले परमात्मा को मैं जानता हूँ, जिसको जाने बिना मृत्यु से छुटकारा पाने का अन्य कोई भी उपाय नहीं है।

इस कथन से जहाँ परब्रह्म का स्वरूप मायावी जगत से सर्वथा परे सिद्ध होता है, वहीं परमात्मा के रूप से

रहित कहे जाने की बात का भी खण्डन होता है।

इसी प्रकार ब्राह्मण ग्रन्थों का भी कथन है कि हे परब्रह्म! मुझे इस असत्य (जगत) से सत्य (अपने अखण्ड स्वरूप) की ओर ले चलो। तमस (प्रकृति के अन्धकार) से प्रकाश (निजधाम) की ओर ले चलो। मृत्यु (लौकिक जगत) से मुझे अमरत्व (ब्रह्मधाम) में ले चलो।

यदि सच्चिदानन्द परब्रह्म का स्वरूप इस नश्वर जगत के कण–कण में व्यापक होता, तो वेद और ब्राह्मण ग्रन्थों का कथन इस प्रकार नहीं होता। ब्रह्म इस सृष्टि का निमित्त कारण है, प्रकृति उपादान कारण है। जिस प्रकार निमित्त कारण कुम्भकार उपादान कारण मिट्टी से बने हुए घड़े के कण में बैठा हुआ नहीं होता है बल्कि घड़े के कण–कण से उसकी कारीगरी दिखती है, उसी प्रकार

निमित्त कारण ब्रह्म इस सृष्टि के कण – कण में निज स्वरूप से नहीं है बल्कि इस जगत के कण –कण में उसकी सत्ता समायी हुई है। मुण्डकोपनिषद में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि दिव्य ब्रह्मपुर में परब्रह्म है। अविनाशी ब्रह्म के चार पाद हैं। वेद के कथनानुसार– यह सम्पूर्ण जगत ब्रह्म के चौथे पाद (अव्याकृत) द्वारा बना है। इसके तीनों पाद चेतन, प्रकाशमय, तथा अखण्ड हैं। परब्रह्म का स्वरूप इन तीनों पादों के भी परे है, जिस स्थान को परमधाम (दिव्य ब्रह्मपुर) कहते हैं।

परब्रह्म के स्वरूप के सम्बन्ध में विद्वत वर्ग में दो प्रकार की विचारधारायें हैं–

पहली विचारधारा के अनुसार परब्रह्म साकार है और श्री राम, श्री कृष्ण, शिव, विष्णु, नारायण आदि के रूप में उनकी पूजा–आराधना की जाती है।

दूसरी विचारधारा परब्रह्म को निराकार मानती है। इस विचारधारा के अनुसार परब्रह्म सर्वव्यापक, निर्गुण, और निराकार है, तथा ध्यान द्वारा उसका अनुभव किया जाता है।

किन्तु वास्तविक सत्य क्या है? इसके लिये तारतम्य ज्ञान की दृष्टि से धर्मग्रन्थों के कथनों का गहन एवं निष्पक्ष चिन्तन आवश्यक है। प्रथम विचारधारा तो मात्र पौराणिक है। उसका कथन वेदों, ११ उपनिषदों, एवं दर्शन शास्त्रों के अनुकूल नहीं है।

वेद के गहन अभिप्राय को न समझने के कारण दूसरी विचारधारा में भी कुछ भ्रान्तियाँ हैं। यदि परब्रह्म को पञ्चभौतिक तन एवं तीनों गुणों से रहित होने के कारण निर्गुण कहा जाये, तथा इस सृष्टि में सत्ता से कण–कण में व्यापक, एवं चेतन निजधाम (ब्रह्मपुर) में

स्वरूप से सर्वव्यापक कहा जाये, तो ठीक है, किन्तु निराकार का अभिप्राय रूप से रहित कहना उचित नहीं है। जब वेद का कथन है कि परब्रह्म सूर्य के समान प्रकाशमान है, तो उसे रूप से रहित कैसे कहा जा सकता है? वस्तुत: निराकार का अर्थ होता है, आकार से रहित, न कि रूप से रहित। वेद के अनेक मन्त्रों में उसे अत्यधिक सुन्दर तथा तेजोमय कहा गया है, किन्तु वह स्वरूप पञ्चभूतात्मक रूप से सर्वथा भिन्न है एवं नस, नाड़ी, रक्त, माँस से रहित है।

१. हे ब्रह्म! तुम शुक्र (नूर) हो, अति देदीप्यमान हो। (अथर्ववेद १७/१/२०)

२. हे ब्रह्म! तुम कान्ति हो, कान्तिमान हो, अति मनोहर हो। (अथर्ववेद १७/१/२१)

३. हे ब्रह्म! आप प्रकाश स्वरूप हो, मैं भी प्रकाशित होऊँ। आप दीप्तिमान हैं, मैं भी दीप्तिमान होऊँ। आप तेज स्वरूप हैं, मुझमें भी तेज को धारण कराइये। (अथर्ववेद ७/८९/४)

४. वह ब्रह्म नूरमयी ज्योति वाला , अदभुत ज्योति वाला, विनाश रहित सत्य ज्योति वाला , और स्वयं ज्योति से परिपूर्ण है। (यजुर्वेद १७/८०)

सर्वत्र प्रकाश ही प्रकाश की अनुभूति होने के कारण ब्रह्म की किसी आकृति की धारणा मन:मस्तिष्क में नहीं बन पाती, किन्तु यह तथ्य हमेशा ही हमें ध्यान में रखना चाहिए कि प्रकाश का मूल स्रोत कोई न कोई अलौकिक स्वरूप अवश्य रखता है। इस सम्बन्ध में वेद का यह कथन विशेष रूप से देखने योग्य है– "उस धीर, अजर, अमर, नित्य तरूण परब्रह्म को ही जानकर विद्वान पुरुष

मृत्यु से नहीं डरता है।" (अथर्ववेद १०/८/४४)

इस सम्बन्ध में विशेष विवेचना के लिये कृपया "सत्याञ्जलि" ग्रन्थ का अवलोकन करें।

❖❖❖❖❖

यत्र ज्योति: अजस्रं, यस्मिन लोके स्वर्हितम्।

तस्मिन मां धेहि पवमान अमृते लोके अक्षित इन्द्राय इन्दो परिस्रव।।

ऋग्वेद ९/११३/७

न तत्र भासयते सूर्यो न शशांको न पावक:।

यद् गत्वा न निवर्तन्ते तद् धाम परमं मम्।। गीता

वेदाहमेतम् पुरुषं महान्तं आदित्य वर्णं तमस: परस्तात्।

तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्य:पन्था विद्यतेऽयनाय।।

यजुर्वेद ३१/१८

असतो मा सद गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय।

मृत्योर्मा अमृतं गमयेति।

शतपथ ब्राह्मण १४/३/१/३०

दिव्ये ब्रह्मपुरे ह्येष: व्योम्नि आत्मा प्रतिष्ठित:।

मुण्डकोपनिषद २/२/७

चतुष्पाद् भूत्वा भोग्य: सर्वमादत् भोजनम्।

अथर्ववेद १०/८/२१

पुरुष एवेदं सर्व यद् भूतं यच्च भाव्यम्।

पादोस्य सर्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि।।

ऋग्वेद १०/९०/२

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुष: पादोऽस्येहाभवत् पुन:।

यजुर्वेद ३१/४

शुक्रोऽऽसि भ्राजोऽऽसि। अथर्ववेद १७/१/२०

रुचिरसि रोचोऽऽसि। अथर्ववेद १७/१/२१

एधोऽस्येधिषीय समिदासिसमेधिषीय। तेजोऽसि तेजोमयि धेहि।।

अथर्ववेद ७/८९/४

शुक्रज्योतिश्च चित्रज्योतिश्च सत्यज्योतिश्च ज्योतिष्मांश्च।

यजुर्वेद १७/८०

तमेव विद्वान न विभाय मृत्योरात्मानं धीरमजरं युवानम्।

अथर्ववेद १०/८/४४

५. तीन पुरुष और उनकी लीला

मनीषी जनों के हृदय में यह बात कौंधती रहती है कि यदि परब्रह्म आनन्द का स्वरूप है , तो उसने यह दु:ख भरी दुनिया क्यों बनायी? यदि वह स्वयं अखण्ड अनादि है, तो उसका बनाया हुआ यह जगत महाप्रलय में क्यों लय को प्राप्त हो जाता है? अपने गुणों के विपरीत इस प्रकार की लीला किसी गहरे रहस्य की ओर संकेत करती है।

गीता में कहा गया है कि दो पुरुष हैं– १. क्षर २. अक्षर। सभी प्राणी एवं पञ्चभूत आदि क्षर हैं, तथा इनसे भी परे कूटस्थ अक्षरब्रह्म कहे जाते हैं। किन्तु इनसे भी परे जो उत्तम पुरुष अक्षरातीत हैं, एकमात्र वे ही

सच्चिदानन्द परब्रह्म की शोभा को धारण करते हैं।

कुछ लोग विश्व को क्षर कहते हैं, प्रकृति को अक्षर कहते हैं, तथा उससे परे पुरुष को पुरुषोत्तम या अक्षरातीत कहते हैं। (पुराण संहिता)

कुछ लोग खोज से रहित होने के कारण जीव तथा नारायण को ही अक्षर कहते हैं। यदि ऐसा है, तो दोनों (नारायण और जीव) महाप्रलय में अपने को सुरक्षित क्यों नहीं रख पाते? नारायण भी जीव हैं, इसलिये वे अक्षर नहीं कहे जा सकते। (पुराण संहिता)

जो लोग भ्रम से मोहित होकर प्रकृति को अक्षर कहते हैं, तो इस प्रकृति को पुरुष के रूप में ही वर्णित करके क्यों नहीं सिद्ध करते?

उपनिषदों में जगत की उत्पत्ति , पालन, एवं प्रलय करने वाले ब्रह्म को ही अक्षर कहा गया है–

१. अक्षर ब्रह्म से ही यह सृष्टि प्रकट होती है।

(मुण्डक उपनिषद)

२. परा विधा से ही उस अक्षर ब्रह्म को जाना जाता है।

३. इस अक्षर ब्रह्म के प्रशासन में ही सूर्य , चन्द्रमा, धुलौक, पृथ्वी आदि स्थित हैं। (बृहदारण्यक उपनिषद)

४. यह अक्षर ही सर्वोपरि ब्रह्म है। इस अक्षर को ही जानकर जो जैसी इच्छा करता है, उसे प्राप्त कर लेता है। (कठोपनिषद १/२/१६)

५. अविनाशी अक्षर ब्रह्म ही आकाश पर्यन्त सम्पूर्ण विश्व को धारण करने वाला है। (वेदान्त दर्शन)

तारतम्य ज्ञान की दृष्टि से धर्मग्रन्थों के कथनों की समीक्षा करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि सच्चिदानन्द परब्रह्म ही अक्षरातीत (उत्तम पुरुष) हैं, जिनकी सत्ता का स्वरूप अक्षर ब्रह्म हैं। अक्षर ब्रह्म के मन (अव्याकृत) के स्वप्न में मोह सागर में नारायण का स्वरूप प्रकट होता है, जिन्हें क्षर पुरुष कहते हैं। सभी जीव इन्हीं की चेतना के प्रतिभास स्वरूप हैं। सम्पूर्ण जीव समुदाय, पञ्चभूतात्मक जगत, अष्टधा प्रकृति (पञ्चभूत + मन + बुद्धि + अहंकार), आदिनारायण, तथा महाशून्य (मोह सागर) सभी क्षर पुरुष के अन्तर्गत हैं।

जिस प्रकार नींद टूटने पर सपना टूट जाता है तथा स्वप्न के सभी दृश्य समाप्त हो जाते हैं, उसी प्रकार अक्षर ब्रह्म के मन का स्वप्न टूटते ही सम्पूर्ण जगत

महाप्रलय में लीन हो जाता है। यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड क्षर का ब्रह्माण्ड, हद, अथवा कालमाया का ब्रह्माण्ड कहलाता है, जिसमें उत्पन्न होने वाली प्रत्येक वस्तु काल के अधीन होने के कारण विनाश को प्राप्त होती है। इस ब्रह्माण्ड में जन्म–मरण, सुख–दु:ख का चक्र चलता रहता है।

इसके परे अक्षर ब्रह्म की लीला का अखण्ड ब्रह्माण्ड है, जिसे बेहद या योगमाया का ब्रह्माण्ड कहते हैं। इसके कण–कण में करोड़ों सूर्यों का प्रकाश है। यह हद के त्रिगुणात्मक जड़ ब्रह्माण्ड के विपरीत चैतन्य है, जहाँ ब्रह्म की अभिन्न शक्ति ब्रह्म (शक्तिमान) के साथ लीला करती है।

इस बेहद से भी परे वह परमधाम है, जहाँ अक्षरातीत परब्रह्म की लीला होती है। यहाँ के कण–कण

में सच्चिदानन्द परब्रह्म का स्वरूप विराजमान है। यहाँ की लीला प्रेम और आनन्द से परिपूर्ण है।

❖❖❖❖❖

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।

क्षर: सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते।।

उत्तम: पुरुषस्त्वन्य: परमात्मेत्युदाहृत:।

यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वर:।।

गीता १५/१६,१७

आत्यन्तिकं तु प्रलयं न सहेते कथं नु तौ।

हिरण्यगर्भजीवाख्यं तस्मान्नक्षर संज्ञितम्।।

अक्षरत्वेन प्रकृतिं ये वदन्ति विमोहिता:।

पुरुषत्वेन निर्दिष्टं कथं पश्यन्ति ते न हि।।

पुराण संहिता २३/२६,२७

अक्षरात् संभवति इह विश्वम्।

मुण्डक उपनिषद १/१/७

अथ् परा यया तदक्षरमधिगम्यते।

मुण्डक उपनिषद १/१/५

एतस्य वा अक्षरस्य प्रशासने गार्गि सूर्य चन्द्रमसौ विधृतौ तिष्ठत एतस्य वा अक्षरस्य प्रशासने गार्गि द्यावा पृथिव्यौ विधृते तिष्ठत। बृहदारण्यक उपनिषद ८/९

एतदेवाक्षरं ब्रह्म हयेतदेवाक्षरं परम् एतध्द्येवाक्षरं ज्ञात्वा यो यदिच्छति तस्य तत्। कठोपनिषद१/२/१६

अक्षरमम्बरान्तधृते:। वेदान्त दर्शन १/३/१०

सा च प्रशासनात्। वेदान्त दर्शन १/३/११

६. स्वलीला अद्वैत परब्रह्म

परब्रह्म के स्वरूप निर्धारण के सम्बन्ध में मनीषियों में प्राय: मतभेद रहे हैं। एक ही वेदान्त दर्शन की व्याख्या में अनेकों मत खड़े हो गये। शंकराचार्य जी ने जीव–ब्रह्म की एकता से सम्बन्धित अद्वैतवाद का सिद्धान्त निरूपित किया, तो रामानुज जी ने विशिष्टाद्वैत, निम्बार्क ने द्वैत–अद्वैत, माधवाचार्य ने द्वैत, वल्लभाचार्य ने शुद्धाद्वैत, तथा प्राचीन वेदानुयायियों ने त्रैतवाद को स्वीकार किया। ये सभी मत एक–दूसरे में सैद्धान्तिक त्रुटियाँ निकालते रहते हैं, किन्तु श्री महामति जी के तारतम्य ज्ञान की दृष्टि से देखने पर इनमें अद्भुत सामञ्जस्य स्थापित हो जाता है। कालमाया के ब्रह्माण्ड में द्वैत है, जीव+प्रकृति की लीला है। योगमाया के ब्रह्माण्ड में अद्वैत है। अक्षरब्रह्म

अपनी अभिन्न स्वरूपा अखण्ड, चैतन्य माया के साथ लीला करते हैं। परमधाम में स्वलीला अद्वैत है। सच्चिदानन्द परब्रह्म अपनी आनन्द शक्ति के साथ स्वयं आत्माओं के स्वरूप होकर लीला करते हैं। यहाँ का कण–कण सच्चिदानन्दमयी है।

जिस प्रकार चन्द्रमा से चाँदनी, सागर से लहरें, सूर्य से किरणें, और हाथ से अँगुलियां अलग नहीं होतीं, उसी प्रकार सच्चिदानन्द परब्रह्म से कभी आत्मायें अलग नहीं होतीं, बल्कि उन्हीं का स्वरूप होती हैं। यही "स्वलीला अद्वैत" का रहस्य है।

इसके विपरीत कालमाया के इस ब्रह्माण्ड में प्राणी इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख–दु:ख आदि द्वन्द्वों के वशीभूत रहते हैं। इन्हें जीव कहते हैं। जीव और आत्मा में धर्मग्रन्थों के आधार पर इस प्रकार का अन्तर पाया

जाता है। श्रुति के कथनानुसार नारायण जीवों के साक्षात परब्रह्म हैं और उन (नारायण) के आभास रूप हैं, जिनमें क्षुद्र उपाधि गुण होता है। वे स्वतन्त्र नहीं, बल्कि पराधीन होते हैं, उन्हें नित्य भी कहते हैं। उनका नित्यत्व अव्याहत (अखण्डता) और भ्रान्ति का मूल भी है। स्वप्न के समय जो पदार्थ उपलब्ध होते हैं, उनका अस्तित्व तभी तक है, जब तक नींद है। इस प्रकार लोग शास्त्र के अभिप्राय को न जानने के कारण विवाद करते हैं।

माहेश्वर तन्त्र के इस कथन से यह सिद्ध है कि सभी जीवों की उत्पत्ति आदिनारायण से है। आदिनारायण को अपने मूल स्वरूप का बोध होते ही महाप्रलय हो जाती है और सभी जीव अपने कारण रूप आदिनारायण में प्रतिबिम्बवाद के सिद्धान्त के अनुसार लय हो जाते हैं।

माहेश्वर तन्त्र में अक्षरातीत परब्रह्म अपनी आनन्द स्वरूपा (श्यामा जी) से कहते हैं– "हे प्रिये! मेरे प्रति तुम्हारा मान उचित है। ये सभी सखियाँ तुम्हारा ही स्वरूप हैं, इसलिये सभी मेरी प्रियतमा हैं। पानी की तरंगों की तरह तथा आग की चिन्गारियों की तरह ये सखियाँ कभी भी तुमसे भिन्न नहीं हैं। उनमें जो हमारा प्रेम है, वह अनेक प्रकार का होता हुआ भी तुम्हारे (श्यामा जी) में परिपूर्ण होता है।"

इस प्रकार से यह स्पष्ट होता है कि आत्मा का अखण्ड सम्बन्ध अक्षरातीत पूर्ण ब्रह्म से है और वे उन्हीं के स्वरूप हैं। इसके विपरीत जीवों का सम्बन्ध क्षर पुरुष (आदिनारायण) से है। जीव जन्म–मरण के चक्र में रहता है, जबकि आत्मा कभी भव बन्धन में नहीं पड़ती। जीव इस द्वैत के ब्रह्माण्ड में ही रहता है, जबकि आत्मा का

मूल निवास अखण्ड, अनादि परमधाम है।

❖❖❖❖❖

तेषां नारायण: साक्षात्परब्रह्म श्रुतीरणात्।

ब्रह्माभासमया जीवा क्षुद्रोपाधि गुणाश्रिता:।।

अस्वतन्त्रा: पराधीना नित्या इत्यपि चक्षते।

अव्याहतं च नित्यत्वं भ्रान्तिमूलमपि प्रिये।।

निद्रोपलब्ध भावानां निद्रा तावत्स्थिति: स्थिरा।

इति यत् शास्त्रोहृदयमज्ञात्वा विवदन्ति ये।।

माहेश्वर तन्त्र २०/४४-४६

नोचितस्ते। प्रिये साध्वि मानो मयि निरागसि।

त्वदात्मक: त्वात्सख्यो मे सर्वा: प्रियतमा अपि।।

लहर्य्य सलिलस्येव यथाग्ने विस्फुलिंगका:।

पृथक न सन्ति ते तद्वत्सख्यो भिन्ना न ते क्वचित्।।

तासु सर्वासु यत्प्रेम मदीयं परिवर्तते।

अनेकधापि विलसत् त्वय्येव पर्यवस्यति।।

माहेश्वर तन्त्र ४१/१२,१३,१४

७. प्रेम, शान्ति, और आनन्द का मूल कहाँ है?

यह सम्पूर्ण जगत मोहात्मक है, जो त्रिगुणात्मिका अव्यक्त प्रकृति से प्रगट हुआ है। प्रेम का शुद्ध स्वरूप त्रिगुणातीत होता है। जब इस त्रिगुणात्मक जगत में प्रेम नहीं तो आनन्द भी नहीं, क्योंकि आनन्द का स्वरूप तो प्रेम में ही समाहित होता है। आनन्द के बिना शान्ति की कल्पना भी व्यर्थ है।

भर्तृहरि का कथन है कि हमने भोगों को नहीं भोगा, बल्कि भोगों ने ही हमें भोग डाला। हमने तप नहीं किया, बल्कि त्रिविध तापों ने ही हमें तपा डाला। काल की अवधि नहीं बीती, बल्कि हमारी ही उम्र बीत गयी। तृष्णा बूढ़ी नहीं हुई, बल्कि हम ही बूढ़े हो गये।

बृहदारण्यक उपनिषद में महर्षि याज्ञवल्क्य अपनी पत्नी मैत्रेयी से कहते हैं कि यदि सम्पूर्ण पृथ्वी को रत्नों से भरकर भी किसी को दे दिया जाये, तो भी उसे शाश्वत शान्ति तथा अमरत्व प्राप्त नहीं हो सकता। इस संसार में अपनी कामना के कारण ही सब कुछ प्रिय होता है। इसलिये एकमात्र परब्रह्म ही देखने योग्य, श्रवण (ज्ञान) करने योग्य, एवं ध्यान करने योग्य हैं। उस परब्रह्म को ही जान लेने पर, सुन लेने पर, या देख लेने पर सब कुछ जाना हुआ हो जाता है। इसी प्रकार कठोपनिषद का भी कथन है कि अपनी आत्मा से जिसने परब्रह्म का साक्षात्कार कर लिया है, एकमात्र उनके पास ही शाश्वत सुख है अन्य के पास नहीं।

इसी कारण रामाचार्य द्वारा बार–बार नचिकेता को लौकिक सुखों का लालच दिये जाने पर भी उसने ठुकरा

दिया और केवल ब्रह्मज्ञान की ही याचना की। यदि सांसारिक भोगों में ही शान्ति मिल सकती थी , तो राजकुमार सिद्धार्थ को अपना राजपाट छोड़कर जंगल में वृक्षों के नीचे समाधि लगाने की कोई भी आवश्यकता नहीं थी।

वस्तुत: इस सृष्टि में परब्रह्म का साक्षात्कार न होने एवं आध्यात्मिकता से दूर रहने में केवल दु:ख ही दु:ख है। तभी तो सांख्य दर्शन ने डिणिडम घोष के साथ कहा है कि प्रकृति के बन्धन से मुक्त हुए बिना इस सृष्टि में कोई भी कहीं भी सुखी नहीं है।

❖❖❖❖❖

जगत् मोहात्मकं प्राहु: अव्यक्तात् व्यक्त संज्ञकम।

महाभारत

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्तास्तपो न तप्तं वयमेव तप्ता:।

कालो न यातो वयमेव यातास्तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा।।

भर्तहरि वैराग्य शतक श्लोक ८

सा होवाच मैत्रेयी यन्नु म इयं भगो: सर्वा पृथिवी कितेन पूर्णा स्यात्स्यां न्वहं तेनामृताऽऽहो ३ नेति नेति होवाच याज्ञवल्क्यो। आत्मन: तु वै कामाय सर्वं प्रियं भवति।

आत्मा वा अरे द्रष्टव्य: श्रोतव्यो मन्तोव्यो निदिध्यासितव्यो मैत्रेय्यात्मनि खल्वरे दृष्टे श्रुते मते विज्ञातं इदं सर्व विदितम्।

बृहदारण्यक उपनिषद ४५/३,६

तमात्मस्थं ये अनुपश्यन्ति धीरा: तेषां शान्ति: शाश्वती नेतरेषाम्। कठोपनिषद २/५/१३

कुत्रापि कोऽपि न सुखी। सांख्य दर्शन ६/७

८. हमारे जीवन का मूल लक्ष्य

श्रीमद्भगवद्गीता में योगेश्वर श्री कृष्ण जी ने महर्षि कपिल को सिद्ध पुरुषों में सर्वोपरि कहा है। ऐसे महामुनि कपिल जी अपने सांख्य दर्शन में कहते हैं– "तीनों प्रकार के दु:खों (दैहिक, दैविक, भौतिक) से पूर्ण रूप से छूटकर ब्रह्मानन्द को प्राप्त करना ही जीवन का सबसे बड़ा पुरुषार्थ है।"

इसी प्रकार शंकराचार्य जी अपने ग्रन्थ विवेक चूड़ामणि में कहते हैं– "किसी प्रकार इस दुर्लभ मनुष्य जन्म को पाकर और उसमें भी, जिसमें श्रुति के सिद्धान्त का ज्ञान होता है, ऐसा पुरुषत्व पाकर जो मूढ़ बुद्धि अपनी मुक्ति के लिये प्रयत्न नहीं करता है, वह असत्

(जड़ प्रकृति) में आस्था रखने के कारण अपने को नष्ट करता है और निश्चय ही वह आत्मघाती है।"

भर्तृहरि द्वारा रचित वैराग्य शतक के वचन तो किसी भी विवेकशील मानव की आँखें खोल देने के लिये पर्याप्त हैं। उनका कथन देखिये– "संसार के सुख और भोग, बादलों में कौंधने वाली विद्युत के समान अस्थिर हैं। जीवन, हवा के झकोरों से लहलहाते कमल के पत्तों पर तैरने वाली पानी की बूँद के समान क्षणभंगुर है। जीवन की उमंगें और वासनायें भी अस्थायी हैं। बुद्धिमान को चाहिये कि इन सब बातों को समझकर अपने मन को स्थिरता और धैर्य के साथ ब्रह्मचिन्तन में लगाये। संसार के नाना प्रकार के सुख–भोग क्षणभंगुर हैं और साथ ही संसार में आवागमन के कारण हैं। इस संसार का कोई भी सुख स्थिर नहीं है, अत: सुख के लिये मारे–मारे फिरना

व्यर्थ है। भोगों का संग्रह बन्द करो और अपने आशारूपी बन्धनों के त्याग से निर्मल हुए मन को अपने आत्म–स्वरूप में और परब्रह्म में स्थिर करो। भोगों की ओर से मन को हटाकर परब्रह्म में लगाना ही सर्वोत्तम कार्य है।"

जीवन जल की उतुंग तरंगों के समान चञ्चल है। यौवन का सौन्दर्य भी कुछ ही दिनों का मेहमान है। धन–सम्पत्ति हवाई महल के समान हैं। सुख–भोग वर्षाकालीन विद्युत की चमक के समान क्षण भर की झलक मात्र हैं। प्रेमिकाओं का आलिंगन भी स्थायी नहीं है। अत: संसार के भय रूपी सागर से पार होने के लिये एकमात्र सच्चिदानन्द परब्रह्म में ही ध्यान लगाओ।

ब्रह्मानन्द का अनुभव करने वाला मनुष्य ब्रह्मा और इन्द्र आदि देवगणों को भी तिनके के समान तुच्छ समझता है। उस परमानन्द के समक्ष उसे तीनों लोकों

का राज्य भी फीका प्रतीत होता है। वास्तविक और विशुद्ध आनन्द तो उसी में है। वह ब्रह्मानन्द निरन्तर बढ़ता ही जाता है। उसको छोड़कर और सभी सुख तो क्षणिक ही हैं। अत: सभी को उसी सच्चिदानन्द परब्रह्म में मन लगाना चाहिए।

❖❖❖❖❖

सिद्धानां कपिलोऽस्मि। गीता

अथ त्रिविध दु:खात् अत्यन्त निवृत्ति: अत्यन्त पुरुषार्थ:।

सांख्य दर्शन १/१

लब्धवा कथंचिन्नरजन्म दुर्लभं तत्रापि पुंस्त्वं श्रुतिपारदर्शनम् य: स्वात्ममुक्तौ न यतेत मुढ़ धी : सह्यात्महा स्वं विनिहन्त्यसद्ग्रहात्।।

विवेक चूड़ामणि ४

भोगा मेघवितान मध्य विलसत्सौदामिनी चंचला

आयुर्वायुविघटिटताब्ज पटलीलीनाम्बुवद् भङ्गुरम्।

लीला यौवन लालसास्तनु भृतामित्याकलय्य द्रुतं

योगे धैर्य समाधि सिद्धि सुलभे बुद्धिं विदध्वं बुधाः।।३७।।

भोगा भंगुर वृत्तयो बहुविधास्तैरेव चायं भवस्तत्कस्येह

कृते परिभ्रमत रे लोका: कृतं चेष्टितै:।

आशा पाशशतोपशान्ति विशदं चेत: समाधीयतां।

कामोत्पत्ति वशात् स्वधामनि यदि श्रद्धेयमस्मद्वच:।।३८।।

आयु: कल्लोललोलं कतिपय दिवसस्थायिनी यौवनश्रीरर्था:

संकल्पकल्पा धन समय तडिद्विभ्रमा भोगपूगा:।

कण्ठाश्लेषोपगूढं तदपि च न चिरं यत्प्रियाभि: प्रणीतं

ब्रह्मण्यासक्ताचित्ता भवत भवभयाम्बोधिपारं तरीतुम।।३९।।

ब्रह्मेन्द्रादिमरूद्गणांस्तृणकणान् यत्र स्थितो मन्यते

यत्स्वादाद्विरसा भवन्ति विभवास्त्रैलोक्यराज्यादय:।

भोग: कोऽपि स एक एव परमो नित्योदितो जृम्भते

भो साधो! क्षणभङ्गुरे तदितरे भोगे रतिं मा कृथा:।।४०।।

वैराग्य शतक श्लोक ३७–४०

९. साम्प्रदायिक मतभेदों के बीच क्या करें?

महर्षि कणाद ने अपने वैशेषिक दर्शन में कहा है कि जिससे लौकिक उन्नति के साथ–साथ मोक्ष की भी प्राप्ति हो, वह ही धर्म है। महाभारत का कथन है कि धर्म ही सम्पूर्ण प्राणिमात्र को धारण करने वाला है। इस कथन का यह स्पष्ट भाव है कि धर्म के बिना मानव अपनी गरिमा भूलकर पशुत्व के स्तर पर आ जायेगा। धर्म और सम्प्रदाय को एक ही समझना बहुत बड़ी भूल है।

धर्म एक वृक्ष है और सम्प्रदाय उसकी शाखायें। धर्म के शाश्वत सत्य को महापुरुषों ने जितना आत्मसात् किया, उतने सत्य को उनके अनुयायियों ने कालान्तर में सम्प्रदाय का रूप दे दिया। सबका आध्यात्मिक स्तर

समान न होने से एक ही परम सत्य के सम्बन्ध में भिन्न–भिन्न विचारधारायें बन गईं, जिसने आज विद्वेष का रूप ले लिया है।

वर्तमान समय में वैदिक (हिन्दू) धर्म में लगभग १००० सम्प्रदाय हैं, जिनमें से लगभग ७०० सम्प्रदाय ऐसे हैं जिनका किसी मान्य ग्रन्थ से स्पष्ट और सत्य दार्शनिक आधार नहीं है। शेष ३०० सम्प्रदायों में से अधिकतर सम्प्रदाय ऐसे हैं, जो अपने सिद्धान्तों को आर्ष ग्रन्थों से पूर्ण रूप से प्रमाणित नहीं कर पाते , फिर भी आज प्रत्येक सम्प्रदाय केवल अपनी ही विचारधारा को सत्य कहता है तथा दूसरे मतों पर कठोर आक्षेप करता है। ऐसी परिस्थिति में जन – सामान्य के सामने यह समस्या आ जाती है कि वह किस विचारधारा को ग्रहण करे।

अध्यात्मिक ज्ञान को आत्मसात् करने में जो कठिनाइयाँ आती हैं, उसे भर्तृहरि जी ने बहुत ही अच्छे शब्दों में व्यक्त किया है। वे कहते हैं– "मनुष्य की आयु लगभग सौ वर्ष है। उसमें से आधी उम्र रात्रि में सोने में चली जाती है। पच्चीस वर्ष बचपन में और बुढ़ापे में चले जाते हैं। शेष पच्चीस वर्ष रोग, वियोग, नौकरी आदि में व्यतीत हो जाते हैं। इस प्रकार इस क्षणभंगुर जीवन में प्राणियों को सुख कैसे मिल सकता है, क्योंकि सभी दु:खमय है।"

वस्तुत: अध्यात्म ज्ञान के जिज्ञासु को आठ प्रमाणों से सत्य–असत्य की परीक्षा करनी चाहिये– १. प्रत्यक्ष २. अनुमान ३. उपमान ४. शब्द ५. ऐतिहय ६. अर्थापत्ति ७. सम्भव ८. अभाव।

किन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि यदि सभी ७ प्रमाण एक तरफ हों और शब्द प्रमाण (वेद का कथन) उनके विपरीत हो, तो भी शब्द प्रमाण को ही सत्य माना जाता है। वेद कथन के विपरीत कोई भी कथन सत्य नहीं माना जाता। जिस सम्प्रदाय का सिद्धान्त वेदानुकूल न हो, उसे कभी भी स्वीकार नहीं करना चाहिए, भले ही उसमें कितनी भी चकाचौंध क्यों न हो।

❖❖❖❖❖

आयुर्वर्ष शतं नृणां परिमितं रात्रौ तदर्धं गतं

तस्यार्धस्य परस्य चार्धमपरं बालत्ववृद्धत्वयो:।

शेषं व्याधि वियोग दु:ख सहितं सेवादिभिर्नीयते

जीवे वारितरङ्गचंचलतरे सौख्यं कुत: प्राणिनाम।।

वैराग्य शतक श्लोक ४९

१०. मूल प्रश्नों का समाधान

तारतम्य ज्ञान की दृष्टि से अध्यात्म जगत के मूल प्रश्नों का समाधान संक्षेप में इस प्रकार है–

१. यह कैसा संसार है, जिसमें मैं लाखों जन्मों से भटक रहा हूँ?

यह सम्पूर्ण जड़ जगत प्रकृति में होने वाली विकृति से बना है। इसका निमित्त कारण ब्रह्म है और उपादान कारण प्रकृति है। पञ्चभूतों द्वारा प्रगट होने वाले ५ विषयों (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध) के भोग की तृष्णा में प्राणी ८४ लाख योनियों में भटकता रहता है। जब तक चैतन्य (जीव) में प्रकृति के सुखों के भोग की वासना रहेगी, तब तक वह इसे पार करके न तो ब्रह्म–

साक्षात्कार कर पायेगा और न ही अखण्ड मुक्ति का सुख प्राप्त कर पायेगा।

२. मेरा निज स्वरूप क्या है?

अपने मूल स्वरूप में जीव शुद्ध और निर्विकार है, किन्तु इस प्राकृतिक जगत में शरीर बन्धन द्वारा उसे विषयों में भटकना पड़ता है। उसे अपनी पूर्ण शुद्ध अवस्था प्राप्त करने के लिये परब्रह्म की उपासना रूप सम्यक समाधि द्वारा पञ्चकोश (अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय) या तीन शरीरों (स्थूल, सूक्ष्म, कारण) से परे होना पड़ेगा। स्थूल शरीर में ५ स्थूल भूत + १० इन्द्रिय + ५ तन्मात्रा + ४ अन्त:करण होते हैं। सूक्ष्म शरीर में १० इन्द्रिय + ५

तन्मात्रा + ४ अन्त:करण होते हैं। कारण शरीर में केवल चार अन्त:करण चैतन्य के साथ जुड़े होते हैं।

महाकारण स्वरूप में चैतन्य के साथ प्रकृति का सम्बन्ध समाप्त होने लगता है और वह परब्रह्म की कृपा से प्राप्त समाधि द्वारा लौह–अग्निवत ब्रह्म के साधर्म्य को प्राप्त कर लेता है। उसके इस शुद्ध स्वरूप को हंस कहते हैं। बेहद में रहने वाली ईश्वरी सृष्टि तथा परमधाम में रहने वाली ब्रह्मसृष्टि को मायाविक बन्धन नहीं होता , वे ब्रह्मबोध तथा अनन्य प्रेम लक्षणा भक्ति के सहारे अपने निजघर को प्राप्त कर लेती हैं।

३. मैं कौन हूँ?

तीनों सृष्टियों में से या तो मैं जीव सृष्टि हूँ या ईश्वरीय

सृष्टि या ब्रह्मसृष्टि। अनन्य प्रेम लक्षणा भक्ति तथा ज्ञान द्वारा ब्रह्मसृष्टि और ईश्वरीय सृष्टि परमधाम तथा बेहद (अक्षरधाम) में चली जायेंगी, और जीव सृष्टि भी वैकुण्ठ–निराकार से परे बेहद में अखण्ड मुक्ति प्राप्त कर लेगी।

४. परब्रह्म कहाँ है?

क्षर पुरुष (आदिनारायण) का स्वरूप मोह सागर में प्रगट हुआ है। अक्षर ब्रह्म की लीला बेहद में होती है तथा इन सबसे परे सच्चिदानन्द परब्रह्म का स्वरूप परमधाम के कण–कण में विराजमान है। इस नश्वर जगत के कण–कण में ब्रह्म की मात्र सत्ता है। संक्षेप में कालमाया के इस ब्रह्माण्ड से परे योगमाया है, जिसके परे परमधाम है।

५. परब्रह्म का स्वरूप कैसा है?

साकार स्वरूप या तो देवी–देवताओं और महापुरुषों का है, या कार्य रूप स्थूल जड़ जगत का। निराकार स्वरूप कारण रूप जड़ प्रकृति, महत्तत्व, अहंकार, आकाश, और वायु का है। सच्चिदानन्द परब्रह्म का स्वरूप साकार और निराकार से परे शुद्ध स्वरूप और त्रिगुणातीत है, जिसे वेद में भर्ग: आदित्यवर्ण आदि तथा कुरान पक्ष में नूर शब्द से सम्बोधित किया गया है।

६. परब्रह्म की लीला कैसी है?

प्रेम के अन्दर ही आनन्द का स्वरूप विराजमान होता है। अत: सच्चिदानन्द अक्षरातीत परब्रह्म की लीला प्रेममयी और आनन्दमयी है। वह इस जगत के समान

सुख और दु:ख की लीला नहीं करते हैं।

❖❖❖❖❖

सा त्वस्मिन् परम प्रेम रूपा। नारद भक्ति सूत्र २

अमृत स्वरूपा च। नारद भक्ति सूत्र ३

११. एकमात्र उपास्य कौन है?

संसार के सभी मतानुयायी इस बात पर तो एकमत हैं कि परमात्मा केवल एक है, फिर भी अज्ञानता के फैलाव के कारण चारों ओर बहुदेववाद की पूजा प्रचलित है।

देवी–देवताओं की मूर्तियों की पूजा तो दूर की बात है, आजकल तो पीरों–फकीरों की कब्रों, पेड़–पौधों, तथा नदियों के पूजन की परम्परा चल पड़ी है।

शतपथ ब्राह्मण का कथन है कि जो एक परब्रह्म को छोड़कर अन्य की भक्ति करता है, वह विद्वानों में पशु के समान है। वस्तुत: महापुरुषों के गुणों की पूजा ही सबसे बड़ी पूजा है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम ने भी ऋषिकेश

में तप किया था। हम उन्हीं की राह पर चलें, तो यही उनकी पूजा है। योगेश्वर श्री कृष्ण तथा शिव जी की तरह ध्यान–समाधि की राह पर चलकर परम तत्व की खोज में लगना ही इनके प्रति सच्ची श्रद्धा प्रकट करना है। शिव जी का चित्र हमेशा ध्यानस्थ अवस्था में ही बनाया जाता है। यदि वे स्वयं परब्रह्म हैं, तो कैलाश पर्वत की गुफा में बैठकर किसका ध्यान करते हैं? रामायण तथा महाभारत में मर्यादा पुरुषोत्तम राम तथा योगिराज श्री कृष्ण जी द्वारा उस परब्रह्म की उपासना का वर्णन है–

"इसके पश्चात् श्री राम चन्द्र जी ने चीर ओढ़कर सायंकाल की संध्या की और लक्ष्मण जी का लाया हुआ जल ही ग्रहण किया।"

रामायण के सुन्दर काण्ड में वर्णित है कि हनुमान जी जब सीता की खोज में लंका जाते हैं, तो अशोक

वाटिका के सरोवर को देखकर कहते हैं–

"सन्ध्या काल में देवी सीता सन्ध्या करने के लिये इस शुभ जल वाली नदी पर आवेंगी ही।"

महाभारत में योगेश्वर श्री कृष्ण द्वारा भी सन्ध्या किये जाने का वर्णन है–

"प्रात:काल उठकर श्री कृष्ण जी ने सारा नित्यकर्म (सन्ध्या आदि) पूर्ण किया। फिर वे ब्राह्मणों की आज्ञा लेकर हस्तिनापुर की ओर चले।

श्री कृष्ण जी ने पवित्र वस्त्राभूषणों से अलंकृत होकर सन्ध्या–वन्दन, सूर्योपस्थान, एवं अगिनहोत्रादि पूर्वाहनकृत्य सम्पन्न किये।"

यह सर्वविदित है कि हनुमान जी वेद तथा व्याकरण के प्रकाण्ड विद्वान, अखण्ड ब्रह्मचारी, एवं महान योगी

हैं। वे दक्षिण भारतीय राजा पवन के पुत्र रहे हैं। उनकी माता का नाम अञ्जना था, किन्तु आज दुर्भाग्य की बात है कि हिन्दू समाज उनकी आकृति बन्दर के रूप में बनाकर पूजा कर रहा है, जो उनका उपहास है। इसी प्रकार जटायू जैसे वानप्रस्थी व तपस्वी, और जाम्बवन्त जैसे विद्वान को गिद्ध और रीछ के रूप में चित्रित करना महापुरुषों का अपमान करना है। अखण्ड ब्रह्मचारी हनुमान जी की सबसे बड़ी पूजा है, उनके गुणों का अनुसरण करना।

वेद का कथन है कि उस अनादि अक्षरातीत परब्रह्म के समान न तो कोई है, न हुआ है, और न कभी होगा। इसलिये उस परब्रह्म के सिवाय अन्य किसी की भी भक्ति नहीं करनी चाहिए।

वेदों में, सम्पूर्ण ऐश्वर्य से युक्त होने के कारण उसी

ब्रह्म को इन्द्र कहा जाता है। सबके लिये प्रीति का कारण होने से मित्र, सबसे श्रेष्ठ होने से वरुण, ज्ञान स्वरूप होने से सुवर्ण, महान स्वरूप वाला होने से गरुत्मान, तथा प्रकाशमय होने से दिव्य कहा जाता है। सत्य स्वरूप वाला अविनाशी ब्रह्म यद्यपि एक ही है, किन्तु उसे अनेक नामों से मेधावी जन कहते हैं। उस ब्रह्म को ही सबका नियामक होने के कारण यम तथा अनन्त बलयुक्त होने के कारण मातरिश्वा कहा जाता है। पुराणों में एक ब्रह्म से भिन्न देवी–देवताओं की कल्पना ने ही बहुदेव उपासना में समाज को भटका रखा है।

पौराणिक ग्रन्थों में एक देवता के अनुयायी दूसरों के प्रति जिस कटु व अश्लील भाषा का प्रयोग करते हैं, उसी का यह दुष्परिणाम है कि प्रायः सभी मत–मतान्तरों में आपस में वैमनस्य रहता है। उस कटु निन्दा की एक

छोटी सी झलक यहाँ पर प्रदर्शित की जाती है–

शिव जी की निन्दा सम्बन्धी ये श्लोक देखिये– पद्मपुराण उ.ख. अध्याय २६६ श्लोक ५३,६०, पद्मपुराण श्लोक ६३,९७,९८,९९। वेद निन्दा– पद्मपुराण अध्याय २५३ श्लोक ४२, ४३, ४४। इसी प्रकार शिव पुराण में एकमात्र शिव जी को ही ब्रह्म बताया, शेष सभी को जीव मानकर निन्दा की गयी है। देखिये ब्रह्मा तथा विष्णु आदि की निन्दा– लिंग पुराण उत्तर भाग अध्याय ११ श्लोक ५,६,१७,३५,३६, शिव पुराण विधे. सं. अध्याय ५ श्लोक १३,१४,७५। किन्तु देवी भागवत में तो तीनों देवताओं को देवी के समक्ष बहुत हीन घोषित किया गया है, देखिये– देवी भागवत स्कन्ध ४ अध्याय १२ श्लोक २,४,५,६,७,८, देवी भागवत स्कन्ध ५ अध्याय १६ श्लोक १६, देवी भागवत

स्कन्ध ४ अध्याय २० श्लोक ४,५,६, देवी भागवत स्कन्ध ३ अध्याय ४ श्लोक १४,१५,१६,१९,२०, २२। अत्यधिक कटु भाषा होने के कारण पद्मपुराण के श्लोक ६३,९७,९८,९९ को नहीं लिखा गया।

❖❖❖❖❖

यो अन्यां देवतामुपासते स न वेद यथा पशुभिरेव देवानाम्।

शतपथ ब्राह्मण १४/४/२/२२

ततश्च चीरोन्त रासङ्ग संध्यमन्वास्य पश्चिमाम्।

जलमेवाददे भोज्यं लक्ष्मणेनाहृतं स्वयम्।।

अयोध्या काण्ड सर्ग ५० श्लोक ४८

सन्ध्याकालमना: श्यामा ध्रुवमेष्यति जानकी।

नदी चेमां शुभजलां सन्ध्यार्थे वरवर्णिनी।।

सु. का. सर्ग १४ श्लोक ५०

प्रातरूत्थाय कृष्णस्तु कृतवान्सर्वाह्निकम्।

ब्राह्मणैरभ्यनुज्ञात: प्रययौ नगरं प्रति।।

उद्योग पर्व ८९/१

कृत्वा पौर्वाह्निकं कृत्यं स्नात: शुचिरलंकृत:।

उपस्तथे विवस्वन्तं पावकंच जनार्दन:।।

उद्योग पर्व ८३/९

न त्वावां अन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते।

ऋग्वेद ७/३२/२३

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निंमाहुरथो दिव्य: स सुवर्णो गरूत्मान्।

एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्त्यग्नि यमं मातरिश्वानमाहु:।।

अथर्ववेद ९/१०/२८

न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते।

न पंचमो न षष्ठ: सप्तमो नाप्युच्यते।।

अथर्ववेद १३/४/१६

देवतानां हितार्थाय वृति: पाषण्डिनां शुभे।

कपाल चर्मभस्मास्थि धारणं तत्कृतं मया।।

ये मे मतमाश्रित्य चरन्ति पृथिवी तले।

सर्व धर्मैश्च रहिता: पश्यन्ति निरयं सदा।।

पद्मपुराण उत्तर खण्ड अध्याय २६६ श्लोक ५३,६०

(आनन्द आश्रम प्रेस पूना)

महेशस्येव दासोऽयं विष्णुस्तेनानुकम्पित:।।

इन्द्रोपेन्द्रादय: सर्वे महेशस्यैव किंकरा:।।

तेन तुल्यो यदा विष्णुर्ब्रह्मा वा यदि गद्यते।

षष्टि वर्ष सहस्त्राणि विष्ठायां जायते कृमि:।।

लिंग पुराण उत्तर भाग अध्याय ११ श्लोक ५,६,१७

शिवलिङ्ग समुत्सृज्य यजन्ते चान्य देवता।

स नृप: सह देशेन रौरवं नरकं व्रजेत।।

शिव भक्तो न यो राजा भक्तोऽन्येषु सुरेषु च।

स्वपतिं युवतिस्त्यक्त्वा यथा जारेषु राजते।।

लिंग पुराण उत्तर भाग अध्याय ११ श्लोक ३५,३६

शप्तो हरिस्तु भृगुणा कुपितेन कामं मीनो बभुव कमठ: खलु सूकरस्तु। पश्चान्नृसिंह इति यच्छल कृद्धराया तान्सेवतां जननि मृत्यु भयं न किं स्यात्।।

देवी भागवत स्कन्ध ५ अध्याय १६ श्लोक १९

१२. भक्ति का मार्ग कैसा हो?

वर्तमान समय में भक्ति की अनेक विधियाँ प्रचलित हैं। सामान्यजन के लिये यह निर्णय करना कठिन होता है कि वह कौन सा मार्ग अपनाये, जिससे उस सच्चिदानन्द परब्रह्म का साक्षात्कार हो सके।

नारद भक्ति सूत्रों में भक्ति को परम प्रेम और अमृत का स्वरूप माना गया है, किन्तु यह कैसे निर्धारित किया जाये कि भक्ति की कौन सी विधा हमारे लिये कल्याणकारिणी है, क्योंकि आजकल तो सैंकड़ों पन्थों की अनेक पद्धतियाँ निकल चुकी हैं। नवधा भक्ति में लीन रहने वाले लोग आरती, भोग, प्रार्थना, परिक्रमा, जोर–जोर से गायन, नाम–जप आदि में लगे रहते हैं , तो

योग–साधना करने वाले लोग हठयोग, नादयोग, लययोग, मन्त्रयोग, कुण्डलिनी जागरण, राजयोग, तथा सूरति शब्द योग में लगे रहते हैं। तारतम्य ज्ञान की सूक्ष्म दृष्टि से विवेचना करने पर ही ब्रह्म के साक्षात्कार की वास्तविक विधि की खोज की जा सकती है। उपनिषदों का कथन है कि वह ब्रह्म मन तथा वाणी से परे है, अत: उसे इन्द्रियों के साधनों, मन एवं वाणी, तथा बुद्धि से प्राप्त नहीं किया जा सकता।

कठोपनिषद ने तो स्पष्ट रूप से कहा है कि जब पाँचों इन्द्रियाँ मन सहित अपने कारण में लय हो जाते हैं तथा बुद्धि भी किसी प्रकार की क्रिया से रहित हो जाती है, तो उसे ही परमगति कहते हैं।

इस कथन से तो यह निर्णय हो जाता है कि नवधा भक्ति के सभी साधन (श्रवण, कीर्तन, स्मरण, अर्चन,

पाद सेवन, वन्दन, दास्य, सख्य, आत्म–निवेदन) ब्रह्म का साक्षात्कार कराने में सक्षम नहीं हैं, क्योंकि ये शरीर, इन्द्रियों, तथा मन–बुद्धि के धरातल पर किये जाते हैं। इस प्रकार की भक्ति केवल साकार रूप वाले देवी–देवताओं तक सीमित होती है।

इसी प्रकार हठयोग के अन्तर्गत आने वाले बन्ध, मुद्रा, प्राणायाम आदि साधनाओं से, तथा नादयोग, लययोग, कुण्डली आदि के जागरण से भी निराकार प्रकृति से परे नहीं हुआ जा सकता, क्योंकि जड़ समाधि की पहुँच महाशून्य (निराकार प्रकृति) से आगे नहीं है। पतञ्जलि के राजयोग द्वारा आत्म–साक्षात्कार की स्थिति प्राप्त की जाती है। सम्प्रज्ञात समाधि द्वारा प्रकृति की अन्तिम सीमा (महत्तत्व) तक का साक्षात्कार हो जाता है।

सम्प्रज्ञात समाधि के पश्चात् असम्प्रज्ञात समाधि की स्थिति मानी जाती है, जिसे निर्बीज समाधि भी कहते हैं। यह योग दर्शन की सर्वोत्तम उपलब्धि है, जिसमें महत्तत्व भी प्रकृति में लीन हो जाता है और चेतन जीव की चित्ति शक्ति केवल अपने स्वरूप मात्र में स्थित रह जाती है। इसी कारण इस दशा को कैवल्य कहते हैं।

इससे भी परे एक अवस्था आती है, जिसमें हंस अवस्था की प्राप्ति होती है तथा जीव का शुद्ध स्वरूप (हंस) परमगुहा में पहुँचकर ब्रह्म का साक्षात्कार करता है। उपनिषद, वेद, वेदान्त आदि में केवल परमगुहा (एकादश द्वार) में ही ब्रह्म के साक्षात्कार का वर्णन है, अन्य नहीं।

किन्तु परमगुहा में भी ब्रह्म की त्रिपाद विभूति (सबलिक, केवल, सत्स्वरूप) का ही साक्षात्कार होता

है। वेद का कथन है कि अक्षरातीत परब्रह्म का स्वरूप त्रिपाद अमृत से भी परे है। अत: इस प्रक्रिया द्वारा भी अक्षरातीत का साक्षात्कार नहीं किया जा सकता। परमगुहा में प्रवेश होकर ब्रह्म का साक्षात्कार करना वेद का सबसे गुह्य योग मार्ग है। कबीर जी द्वारा प्रवर्तित सूरति–शब्द योग भी यही मार्ग है। इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि अक्षरातीत पूर्ण ब्रह्म का साक्षात्कार करने के लिये हमें शरीर, मन, बुद्धि आदि के धरातल पर होने वाली उपासना पद्धतियों को छोड़कर श्री प्राणनाथ जी की तारतम वाणी के आधार पर उस मार्ग का अवलम्बन करना पड़ेगा, जिसके विषय में गीता में कहा गया है कि एकमात्र अनन्य प्रेम लक्षणा भक्ति द्वारा ही प्रकृति से परे उस उत्तम पुरुष अक्षरातीत का साक्षात्कार किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त अन्य

कोई भी मार्ग नहीं है।

❖❖❖❖❖

यदा पंचावतिष्ठन्ते, ज्ञानानि मनसा सह।

बृद्धिश्च न विचेष्टति आहु: तां परमा गतिम्।।

कठोपनिषद २/६/१०

यतो वाचो निवर्तन्ते, अप्राप्य मनसा सह।

आनन्द ब्रह्मणो विद्वान न विभेति कदाचनेति।।

तैत्तिरीय उपनिषद २/४

श्रवण कीर्तनं विष्णो: स्मरणं पादसेवनं।

अर्चनं वन्दन दास्यं सख्यं आत्म निवेदन।।

तस्यापि निरोधे सर्वनिराधान्निर्बीज समाधि:।

योग दर्शन १/५१

पुरुषार्थ शून्यानां गुणानां प्रति प्रसव:

कैवल्यं स्वरूप प्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति।

योग दर्शन ४/३४

वेनस्तत् पश्यत परमं गुहां यद् यत्र विश्वं भवत्येकरूपम्।

त्रीणि पदानि निहिता गुहास्य यस्तानि वेद स पितुष्पितासत।।

अथर्ववेद २/१/१,२

त्रिपादुर्ध्व उदैत्पुरुष:। यजुर्वेद ३१/४

शुभ्रो हि अक्षरात् परत: पर:।

मुण्डक उपनिषद २/१/२/४

पुरुष: स पर: पार्थ भक्त्या लभ्यस्तु अनन्यया।

गीता

गुहां प्रविष्टौ आत्मन्नो हि तत् दर्शनात्।

वेदान्त दर्शन १/२/११

पुरमेकादशद्वारमजस्यावक्रचेतस:।

अनुष्ठाय न शोचति विमुक्तश्च विमुच्यते।।

कठोपनिषद ५/१

हंस: शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत्।

कठोपनिषद ५/२

१३. अवतार एवं परब्रह्म के प्रकटन की समीक्षा

गीता में योगेश्वर श्री कृष्ण जी कहते हैं कि जब–जब धर्म की हानि होती है, तब–तब मैं धर्म की वृद्धि के लिये अवतरित होता हूँ। उनका यह कथन संसार के कल्याण के लिये अवतरित होने वाले महापुरुषों की भावना से सम्बन्धित है। वेदान्त ने भी इसी तथ्य की तरफ संकेत किया है कि जीवनमुक्त महापुरुष संसार में धर्म की स्थापना हेतु अवतरित होते रहते हैं। पौराणिक ग्रन्थों में विष्णु भगवान द्वारा अवतार धारण करना भी इसी तथ्य की पुष्टि करता है, किन्तु वेद के कथनानुसार सच्चिदानन्द परब्रह्म का अवतार होना सम्भव नहीं है। छांदोग्य उपनिषद के षष्ठ प्रपाठक का कथन है कि आत्मरति (परब्रह्म के प्रति परम प्रेम रखने वाला) पुरुष स्वराट

(शुद्ध ज्ञान स्वरूप) होता है। इस प्रकार के महापुरुष ही संसार के कल्याणार्थ शरीर धारण किया करते हैं, जिन्हें पौराणिक मान्यता में अवतार की संज्ञा दी जाती है। वेद, गीता, उपनिषदों में वर्णित कूटस्थ , ध्रुव (अखण्ड), परिणाम से रहित ब्रह्म कभी भी गर्भ में नहीं आ सकता।

यह गहन जिज्ञासा की बात है कि बहुदेव उपासना तथा परब्रह्म के अवतारवाद का निषेध करने वाला निजानन्द सम्प्रदाय किस प्रकार यह घोषित करता है कि वर्तमान कलियुग में परब्रह्म की शक्ति ने दो तनों में लीला की है?

वस्तुत: जिन दो तनों (श्री देवचन्द्र और श्री मिहिरराज) में परब्रह्म के प्रकट होकर लीला करने की बात की जाती है, वह उनकी उम्र के ४० वर्ष के बाद की बात है। जब दोनों तनों की उम्र ४० वर्ष की थी, तो उन

तनों में विद्यमान आत्माओं ने अपने प्रियतम परब्रह्म का प्रत्यक्ष साक्षात्कार किया।

जिस प्रकार अग्नि में तपकर लोहा अग्नि के साधर्म्य (समान गुण) को प्राप्त कर लेता है, उसी प्रकार परब्रह्म के साक्षात्कार द्वारा परब्रह्म की साधर्म्यता प्राप्त कर ली जाती है। तैत्तिरीयोपनिषद का कथन है कि "ब्रह्म को जानने वाला ब्रह्म के स्वरूप जैसा हो जाता है।" श्री निजानन्द सम्प्रदाय में इसी सिद्धान्त को मानकर उन्हें ब्रह्मस्वरूप माना जाता है।

पौराणिक मान्यता में सभी अवतारों को गर्भ में जन्म लेने से जोड़ा जाता है। रामचरित मानस का रामावतार के सम्बन्ध में कथन है कि "जा दिन से हरि गर्भहि आये" किन्तु श्री निजानन्द सम्प्रदाय की मान्यता इस प्रकार की नहीं है। वह पञ्चभौतिक तन में मात्र परब्रह्म की

आवेश और जोश की शक्ति के प्रकटन की बात करता है। सच्चिदानन्द अक्षरातीत परब्रह्म, जो अनन्त सूर्यों से भी अधिक प्रकाशमान हैं, वे कभी भी माता के गर्भ में नहीं आ सकते। तन के जन्म लेने के पश्चात् ही उसमें प्रकटने वाले आवेश स्वरूप को परब्रह्म के प्रकटन की संज्ञा दी जाती है। अनेक धर्मग्रन्थों में इस २८वें कलियुग में परब्रह्म के आवेश स्वरूप द्वारा अलौकिक ब्रह्मज्ञान के प्रकटीकरण का वर्णन है, जिसे आगे स्पष्ट किया जायेगा।

❖❖❖❖❖

सर्वत्र समचिन्त्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम्।

गीता १२/३

ब्रह्मविदो ब्रह्मेव भवति।

मुण्डक उपनिषद ३/२/९

१४. परमधाम का प्रेम–विवाद (इश्क–रब्द)

पुराण संहिता में कहा गया है–

अक्षर ब्रह्म पूर्ण–अखण्ड, प्रकृति के गुणों से रहित, आसक्ति रहित, निर्मल, अनन्त, इच्छा रहित, और प्रकृति से परे है।।२२/४४।।

इसी प्रकार वह अनादि परब्रह्म सत्, चित्, और आनन्द लक्षणों वाला है। रस तथा रूप के भेद से वह नित्य ही अलग स्थित है।।५१।।

उपमा से रहित, स्वलीला अद्वैत, तथा इन्द्रियों से प्रत्यक्ष न होने वाला वह परब्रह्म अति प्रेममयी स्वरूप को धारण करने वाला है तथा आत्मा रूप सखियों का अति प्यारा परम तत्व है।।५३।।

उस प्रेममयी परम तत्व को धारण करने, प्यार करने, तथा रस लेने में सखियाँ प्रत्यक्ष रूप से समर्थ नहीं हैं। अत: उनसे प्रेम क्रीड़ा करने के लिये उनके ही अलग रूप में स्वामिनी (श्यामा जी) प्रथम अंग हैं।। ५४।।

अक्षर ब्रह्म के हृदय को प्रेम एवं आनन्द की हिलोरें लेने वाले सागर के स्वभाव से रहित जानना चाहिए, जो मात्र ज्ञान के स्वरूप हैं और बालक की तरह सृष्टि को बनाने और संहार करने की लीला करते हैं।।५९।।

इसलिये उस अक्षर ब्रह्म में परमधाम में प्रवेश की इच्छा उत्पन्न करने के लिये अखण्ड रूप में प्रेम का अंश अल्प मात्रा में स्थित रहता है।।६१।।

एक बार अक्षर ब्रह्म अक्षरातीत परब्रह्म का दर्शन

करने के लिये परमधाम में गये।।६५।।

परमधाम की लीला देखने की इच्छा वाले अक्षर ब्रह्म ऊपर दृष्टि किये हुए अनन्य हृदय से केवल उस रंगमहल की भूमिका की ओर ही देखते हुए बहुत अधिक समय तक खड़े रहे। उस समय तीसरी भूमिका में विराजमान अक्षरातीत नृत्य और गान में तल्लीन सखियों से घिरे हुए थे।।६६,६७।।

उसे देखकर अक्षर ब्रह्म भौंचक्का होते हुए मोहित मन वाले हो गये। तब उन्होंने अपने मन में यह विचार किया कि अहो! यह कितनी अदभुत छवि है।।७४।।

यह लीला अतुलनीय रहस्य वाली है। देखने के लिये व्याकुल मैं उसे कैसे देख सकता हूँ। यदि अक्षरातीत मेरे ऊपर कृपा करें, तो मैं उसे देख भी

सकता हूँ।।७९।।

इसी प्रकार अक्षरातीत की प्रियाओं (आत्माओं) ने कहा– हे नाथ! इस पूर्ण आनन्दमयी धाम में भला क्या दुर्लभ हो सकता है? फिर भी हे नाथ! आपकी प्रियाओं में एक बहुत बड़ी इच्छा है।।२३/५१।।

हे प्रियतम! इस इच्छा की व्याकुलता हमें बहुत अधिक पीड़ा दे रही है। उसे पूरा करके हमें कष्ट से मुक्त कीजिए। अक्षर ब्रह्म की प्रकृति की जो विचित्र लीला है, उसे देखने की इच्छा हमारे चित्त को व्याकुल कर रही है। अब बिना कुछ भी विचार किये आज ही हमें उस लीला का दर्शन कराइये।।५२,५३।।

अक्षरातीत पूर्णब्रह्म अपनी आत्माओं से कहते हैं– प्रकृति की लीला मोहित करने वाली तथा अपने

अमृतमयी आत्मिक आनन्दरूपी दीवार को स्याही की तरह काली करने वाली है। जहाँ केवल प्रवेश करने मात्र से ही अपनी बुद्धि नहीं रहती है।।५६।।

पाँच तत्वों के बने हुए शरीर को ही अपने आत्मिक रूप में माना जाता है, जिससे आत्मिक गुण तो छिप जाते हैं।।५७।।

और उनकी जगह मोहजनित दोष पैदा हो जाते हैं। हे सखियों! तुम वहाँ जाकर माया के ही कार्यों को करोगी। जिस माया में आत्मा के आनन्द को हरने वाली तृष्णा रूपी पिशाचिनी है।।५८।।

जहाँ काम, क्रोध आदि छः शत्रु स्थित हैं, जो जीव को पाप में डुबोकर तथा क्रूर कर्म कराकर उसे बलहीन करके लूट लेते हैं।।५९।।

वहाँ जाकर तुम यहाँ के अपने स्वाभाविक गुणों, सौन्दर्य, और चतुरता के विपरीत हो जाओगी। मुझे तुम कहीं भी नहीं देखोगी और हमेशा ही मुझको भूली रहोगी।।७८।।

इसी प्रकार का वर्णन नारद पंचरात्र के अन्तर्गत माहेश्वर तन्त्रम् में भी किया गया है।

कुरआन के अन्दर "अलस्तो बिरब्ब कुंम" का कथन भी इसी इश्क रब्द (प्रेम–संवाद) की ओर संकेत करता है।

कुछ–कुछ समय के अन्तराल पर आत्माओं ने परब्रह्म से तीन बार प्रार्थना की। अक्षर ब्रह्म भी प्रतिदिन अपने हृदय में परमधाम की उस लीला को देखने की इच्छा करते रहे। परमधाम की उस लीला के चिन्तन में

खोये हुए हृदय वाले अक्षर ब्रह्म अपने धाम जाकर अपने निवास स्थान में अखण्ड समाधि की भांति स्थित हो गये।

इस प्रकार परमधाम के इस प्रेम संवाद के कारण आत्माओं के साथ परब्रह्म को अनहोनी घटना के रूप में व्रज, रास, एवं जागनी ब्रह्माण्ड (इस २८वें कलियुग) में आना पड़ा, जिसका वर्णन आगे किया जायेगा।

❖❖❖❖❖

पुराण संहिता प्रकरण २२–

अक्षर: पुरुष पूर्णोऽनवच्छिन्नश्च निर्गुण:।

नि:सङ्गो निर्मलोऽनन्तो निरीह: प्रकृते: पर:।।४४।।

अनादिमत्परं ब्रह्म सच्चिदानन्द लक्षणम्।

रस रूपतया तत्तु नित्यमेव पृथक् स्थितम्।।५१।।

अनोपम्यात्स्व भोग्यत्वात्पुरुषागोचरत्वत:।

प्रेष्ठत्वात्परमं तत्वं स्त्रीणां काम स्वरूपधृक्।।५३।।

पातुं लालयितुं भोक्तुं स्त्रिय: शक्ता न तं परे।

रमणार्थ प्रथग्भावात्स्वामिनी प्रथमं दलं।।५४।।

नि: स्पंदैर्वृतिभिर्हीनं तथान्त:करणेन च।

तदक्षरं च विज्ञेयं ज्ञानमात्रं च बालवत्।।५९।।

द्वारत्व सिद्धये तस्मिन्निच्छा विर्भावहेतवे।

कामांशो लवमात्रस्तु नित्यमेव व्यवस्थित:।।६१।।

तदैकदाऽक्षरो दृष्टुं जगाम पुरुषोत्तमम्।

महासौधाङ्गणबहि: पद्मोद्यानभुविश्रित:।।६५।।

दिदृक्षाकुलाचित्तत्वादूर्ध्वदृष्टि: कृतांजलि:।

अनन्यचेतास्तत्सौध भूमिकालग्न लोचना:।।६६।।

चिरंतस्थौ तदाकृष्णौ भूमिका तृतीयांश्रित:।

सखी वृन्दै: परिवृतौ नृत्यगान परायणै:।।६७।।

दृष्टवा विमोहित मना वभुवाविकृतोऽपि सन्।

विचारयामास तदा अहो किमिदमद्भुतम्।।७४।।

लीलारहस्यमतुलं कथं द्रक्ष्येहमातुर:।

द्रक्ष्येहमपि चेत्कृष्णोऽनुग्रहं कुरूते मयि।।७९।।

पुराण संहिता प्रकरण २३–

पूर्णानन्द पदे नाथ दुर्लभं किं न विद्यते।

तथापि महती नाथ तृष्णैका त्वत्प्रियासु च।।५१।।

कुरूते महतीमार्ति तां वारय महाभुज।

अक्षर प्रकृतेर्लीला विचित्रा या प्रवर्तते।।५२।।

तद्विदृक्षा तु नश्चित्तमाकुलीकुरूते प्रभो।

तल्लीला दर्शनं नोद्य कारयाश्चविचारत:।।५३।।

प्रकृता मोहिनी लीला स्वात्मभित्ति सुधामसी।

यत्र प्रवेश मात्रेण स्वात्मानमुत्सृजेद्बुध:।।५६।।

पंच भूतमयम्पिण्डमात्मत्वे नाभिमन्यते।

तिरो भवेयु: स्वात्मधर्मा उद्भवन्ति ततोऽन्यथा।।५७।।

आचरिष्यथ भो सर्वा मायाकार्याणि सर्वथा।

तृष्णा पिशाची यत्रास्ते स्वात्मानन्दापहारिणी।।५८।।

काम क्रोधादिनामानो यत्र षट् दस्यव: स्थिता:।

पाविष्टा: क्रूर कर्माणो विलुम्पन्ति बलाद्धतम्।।५९।।

गुण सौन्दर्य चातुर्यवैपरीत्यमवाप्स्यथ।

मां न द्रक्ष्यथ कुत्रापि विस्मरिष्यथ सर्वदा।।७८।।

पुराण संहिता प्रकरण २४–

समय व्यवधानेन त्रिवारं प्रार्थितो विभु:।

अक्षरेणान्वहमपि तदधाद्धृदये निजे।।२५।।

अक्षरस्तु स्वकं धाम गत्वे निजपदे स्थित:।

लीलाचिन्ताप्रविष्टात्मा समाधिस्थ इवाचल:।।२६।।

१५. व्रज एवं रास लीला

परब्रह्म की तरह ही आत्मा भी गर्भवास नहीं करती है। अत: परमधाम से ब्रह्मसृष्टियों की सुरता अपने मूल परात्म के तनों को छोड़कर व्रज में युवा गोपियों के तनों में बैठ गयी। परमधाम अनन्त सूर्यों के समान प्रकाशमान है, वहाँ से एक कण भी न तो इस नश्वर जगत में आ सकता है और न यहाँ से कुछ वहाँ जा सकता है। पुराण संहिता में यह तथ्य अति सुन्दर शब्दों में वर्णित है–

"बारह हजार सखियाँ, जो अक्षरातीत की अँगना हैं, माया का खेल देखने की इच्छा से इनकी मनोवृत्ति (सुरता) गोकुल में गई। वे गोपों के घरेलू कार्यों को करती हुईं वहीं स्थित हो गयीं तथा मायाजनित मिथ्या

धारणा के आधीन होने के कारण अपने वास्तविक स्वरूप की खोज से रहित हो गयीं। मूल मिलावा में विराजमान अक्षरातीत की वे प्रियायें अपने स्थानों पर बैठी ही रहीं। अक्षरातीत के सामने समूहबद्ध बैठी हुई ही वे सपने के खेल में मोहित हो गयीं। (पुराण संहिता २६/८०,८१,८२)

इस प्रकार उन प्रियाओं को अपने सामने नश्वर जगत के मोह में डूबा हुआ देखकर, अति कृपालु अक्षरातीत ने भी वहाँ जाने के लिये अपने मन में धारणा बना ली। (पुराण संहिता २६/९७)

कूटस्थ अक्षर ब्रह्म की चित्तवृत्ति में अपना आवेश स्थापित करके पुरुषोत्तम अक्षरातीत नन्द के घर प्रकट हुए।

इस प्रकार ११ वर्ष ५२ दिन तक श्री कृष्ण जी के तन में विराजमान अक्षरातीत ने अपनी आत्मा स्वरूपा गोपियों के साथ प्रेम लीला की। इसके अन्दर कंस द्वारा भेजे गये अघासुर, बकासुर, शकटासुर आदि राक्षसों का भी वध किया। ११ वर्ष की प्रेममयी लीला के पश्चात् ५२ दिन की विरह लीला हुई। तत्पश्चात् महारास की लीला के लिये उन्होंने योगमाया के ब्रह्माण्ड में प्रवेश किया। योगमाया का वह ब्रह्माण्ड इस नश्वर जगत से पूर्णतया अलग है, जिसमें चेतनता, अखण्डता, तथा प्रकाशमयी शोभा है। उसमें लक्ष्मी के मुख के समान सुन्दर पूर्णमासी का अखण्ड स्वरूप वाला चन्द्रमा उगा हुआ था, जिसकी कोमल किरणों से सम्पूर्ण नित्य वृन्दावन सुशोभित था। अक्षरातीत के आवेश ने अति सुन्दर स्वरूप धारण कर बाँसुरी बजाई।

उस मधुर ध्वनि को सुनकर कालमाया के ब्रह्माण्ड की गोपियाँ अपने–अपने तनों को छोड़कर योगमाया के ब्रह्माण्ड में पहुँची और अलौकिक तन धारण कर अपने प्रियतम के साथ ब्रह्मानन्दमयी रास लीला की। रास लीला के मध्य विरह की भी अनुभूति कराकर अक्षर की आत्मा को भी परब्रह्म ने यह बता दिया कि वे योगमाया के ब्रह्माण्ड में परमधाम वाली ही लीला देख रहे थे। पुन: अक्षरातीत ने आवेश स्वरूप प्रकट कर रास लीला करके दोनों को आनन्दित किया।

पुन: आत्माओं की इच्छा पर परब्रह्म उन्हें परमधाम ले गये, जहाँ वे अपने मूल तनों में जाग्रत हो गयीं। अक्षर ब्रह्म की चित्तवृत्ति भी अपनी परात्म में जाग्रत हुई। ब्रह्मसृष्टियों की माया देखने की इच्छा अभी पूरी न हो सकने के कारण, उन्हें पुन: इस नश्वर जगत में आना

पड़ा। इस व्रज, रास, एवं जागनी लीला में अक्षर ब्रह्म की सुरतायें भी साथ–साथ रही हैं।

❖❖❖❖❖

इत्याद्या: सूर्यसाहस्त्रीसङख्याता: कृष्ण वल्लभा:।

प्राग्वासना वासित मनो वृतयो गोकुलं ययु:।।

ता गोप गेह कृत्यानि कुर्वाणास्तत्र संस्थिता:।

पराध्यासवशं प्राप्ता: स्वानुसंधानवर्जिता:।।

मूलभूमौ तु ता: कृष्ण प्रिया: स्वासनसंस्थिता:।

कृष्णस्य पुरत: पङक्त्याकारेण स्वप्नेमोहिता:।।

पुराण संहिता २६/८०,८१,८२

प्रादुर्भूतस्तत्र नन्द गृहेऽपि पुरुषोत्तम:।

कुटस्थ चित्तवृत्तौ तु निजावेशं निधारयन्।।

पुराण संहिता ३१/१२,१३

तस्मादेकादश समा द्विपंचाशद्दिनानि च।

कृष्णो ब्रजात्तु संयातो लीलां कृत्वा स्वमालयम्।।

आलमन्दार संहिता ६/११४

भगवानपि ता रात्रि: शरदोत्फुल्लमल्लिका:

वीक्ष्यरन्तु मनश्चक्रे योगमायामुपाश्रित:।।

भागवत १०/२९/१

१६. त्रिधा लीला

आजकल चारों ओर श्री कृष्ण भक्ति का प्रचार है, किन्तु श्री कृष्ण जी के वास्तविक स्वरूप का बोध विरले ही लोगों को है। किसी–किसी को ही यह बात मालूम होगी कि श्री कृष्ण नाम तो एक ही रहा है, किन्तु उसमें लीला करने वाली तीन शक्तियाँ अलग–अलग समय पर कार्य करती रही हैं। ११ वर्ष ५२ दिन की लीला के पश्चात् जब अक्षरातीत का आवेश योगमाया के ब्रह्माण्ड में गया, तो इस ब्रह्माण्ड का महाप्रलय कर दिया गया था, तथा पुन: इस ब्रह्माण्ड को जैसा का तैसा बना दिया गया जिसमें पुन: प्रतिबिम्ब की रास लीला हुई। यदि महाप्रलय की स्थिति न मानें, तो प्रश्न यह होता है कि बाँसुरी की आवाज सुनते ही सभी गोपियाँ तो अपना तन छोड़कर

योगमाया के ब्रह्माण्ड में जा चुकी थीं, तो उनके दाह संस्कार का कहीं भी वर्णन क्यों नहीं आया ? बल्कि भागवत में तो यह लिखा है कि गोपों ने अपनी पत्नियों (गोपियों) को प्रात:काल अपने पास सोते हुए पाया। यह तथ्य स्पष्ट करता है कि ये गोपियाँ नयी थीं, जिन्हें पूर्व ब्रह्माण्ड के महाप्रलय हो जाने का कुछ भी अहसास नहीं था।

तारतम ज्ञान की दृष्टि तथा धर्मग्रन्थों के कथनों से यह स्पष्ट होता है कि ११ वर्ष ५२ दिन तक श्री कृष्ण जी के तन में अक्षरातीत के आवेश ने लीला की। इस नये ब्रह्माण्ड के बनने पर प्रतिबिम्ब लीला में सात दिन गोकुल में तथा चार दिन मथुरा में गोलोकी श्री कृष्ण जी की शक्ति ने लीला की, और इसके पश्चात ११२ वर्ष तक वैकुण्ठ विहारी विष्णु भगवान ने श्री कृष्ण के रूप में

लीला की, कंस का वध करने के पश्चात् गोलोकी शक्ति व्रज में राधा जी के हृदय में विराजमान हो गयी थी। यही कारण है कि वर्षों तक विरह में तड़पने के बाद भी राधा सहित गोपियाँ (वेद–ऋचा एवं कुमारिकाओं के जीव स्वरूप गोलोकी सखियाँ) मथुरा जाकर विष्णु स्वरूप श्री कृष्ण से भेंट नहीं कर सकी थीं, जबकि गोकुल तथा मथुरा के बीच केवल सात कि.मी. की दूरी है।

बृहद सदाशिव संहिता ग्रन्थ में त्रिधा लीला का बहुत ही सुन्दर वर्णन है, जो इस प्रकार है–

सच्चिदानन्द लक्षणों वाले अक्षरातीत ने ही श्री कृष्ण के रूप में, प्रियाओं द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, नित्य वृन्दावन में प्रेमपूर्वक लीला की।।७।।

खेल देखने की इच्छा के कारण होने वाली

वियोगमयी लीला के विहार में अपनी प्रियाओं का अनुसरण करने वाले परब्रह्म ने अपने अंशरूप आवेश के साथ अक्षर ब्रह्म की सुरता (चित्तवृत्ति) सहित व्रज मण्डल में आकर वास किया।।८।।

नित्य वृन्दावन के अन्दर जो गुह्य लीला हुई, वह अक्षर ब्रह्म से भी परे स्थित अक्षरातीत की लीला थी। वह गुह्य से भी गुह्य एवं मन–वाणी से अगम है। वह लीला अब अक्षर ब्रह्म के हृदय में अखण्ड रूप से स्थित है।।९।।

नित्य वृन्दावन में परब्रह्म की लीला रूप जो परम ऐश्वर्य स्थित है, वही गोकुल में बाल्यावस्था तथा किशोर लीला के भेद से कहा गया है।।१०।।

वैकुण्ठ का जो वैभव है, वह मथुरा एवं द्वारिका में

स्थित कहा गया है। वृन्दावन और मधुवन में जो लीला रूप ऐश्वर्य स्थित है, वह गोलोक के आश्रय से हुआ है।। ११।।

रास लीला के समय श्रुतियों द्वारा स्तुति किये जाने पर श्री कृष्ण जी ने प्रसन्न होकर उन्हें इच्छानुकूल वरदान दिया। अत: वृन्दावन एवं मधुवन के अन्दर गोलोकी श्री कृष्ण जी ने उन सखियों के साथ सात दिन तक लीला की। पुन: व्रज मण्डल को छोड़कर मथुरा चले गये। चार दिनों के अन्दर कंस आदि को मारकर धाम पहुँचा दिया।।१२,१३।।

इसके बाद वे अपने तेज सहित गोपियों के हृदय रूपी धाम में गुप्त रूप से स्थित हो गये। तब उनके विरह से व्याकुल चित्त वाली श्रुति रूपा सखियाँ उस गोलोक धाम में चली गयीं।।१४।।

इसके पश्चात् पृथ्वी का भार हरण करने की इच्छा से मथुरा में चक्रधारी विष्णु रूप श्री कृष्ण कुछ वर्षों तक रहे।।१५।।

इसके बाद वे द्वारिका गये और तत्पश्चात् वैकुण्ठ में विराजमान हो गये। इस प्रकार श्री कृष्ण जी की त्रिधा लीला का यह रहस्य बहुत ही गोपनीय तरीके से कहा गया है।।१६।।

❖❖❖❖❖

दृष्टवा कुमुद्वन्तमखण्ड मण्डलं रमाननाभं नवकुंकुमारूणम्।

वनं च तत्कोमल गोभिरंजितं जगौ कलं वामदृशां मनोहरम।।

भागवत १०/२९/३

तमेव परमात्मानं जार बुद्धयापि सङ्गता:।

जहुर्गुणमयं देहं सद्य: प्रक्षीण बन्धना:।।

भागवत १०/२९/११

नासूयन् खलु कृष्णाय मोहितास्तस्य मायया।

मन्यमाना: स्वपार्श्वस्थान स्वान् स्वान् दारान् व्रजौकस:।।

ब्रह्मरात्र उपावृत्ते वासुदेवानुमोदिता:।

अनिच्छन्त्यो ययुर्गोप्य: स्वगृहान् भगवत्प्रिया:।।

भागवत १०/३३/३९

ग्रस्त: प्रपंचो नि: शेष: कालशक्ति विनिर्मित:।

योग शक्त्या तदा मोहमृते शिष्टं न किंचन।।

तस्मिन्नेव महामोहे निर्मितो योगमायया।

प्रपंच: पुनरेवायमुत्थित: सहसा महान्।।

पुराण संहिता २९/४५,४६

कृष्ण एव अक्षरातीत: सच्चिदानन्द लक्षण:।

प्रियाभि: प्रार्थित: प्रेम्णा रेमे वृन्दावने विभू:।।७।।

विप्रलम्भ विहारार्थं प्रियामनुगत: प्रभु:।

व्रजमाव्रज्य सोंशेनाक्षर बुध्धया विशद्धरौ।।८।।

वृन्दावनाश्रयालीला साक्षरात्परत: परा।

गुह्याद् गुह्यतरागम्या नित्याक्षरहृदि स्थिता।।९।।

यदब्रह्मपरमैश्वर्ये नित्यवृन्दावने स्थितम्।

तदेव गोकुले प्रोक्तं बाल्यकैशोर भेदवत्।।१०।।

वैकुण्ठवैभवं यच्च मथुराद्वारिकाश्रितम्।

मध्ये वृन्दामधुवनं यच्च मध्यालयाश्रयम्।।११।।

श्रुतिभि: संस्तुतो रासे तुष्ट: कामवरं ददौ।

वृन्दावनं मधुवनं तयोरभ्यन्तरे विभु:।।१२।।

ताभि: सप्तदिनं रेमे वियुज्य मथुरां गत:।

चतुर्भिर्दिवसैरीश: कंसादीननयत्परम।।१३।।

तत् आदाय तद्धाम गुढ़ं गोपीहृदि स्थितम्।

तदाधिना क्षिप्त चिन्तास्तत्पदं श्रुतयो ययु:।।१४।।

ततो मधुपुरी मध्ये भुवो भार जिहीर्षया।

यदुचक्रा वृतो विष्णुरूवास कतिचित्समा:।।१५।।

ततस्तु द्वारकां यातस्ततो वैकुण्ठमास्थित:।

एवं गुह्यतर: प्रोक्त: कृष्ण लीलारसस्त्रिधा:।।१६।।

वृहत्सदाशिव संहिता श्रृति रहस्य

१७. धर्मग्रन्थों की भविष्यवाणियाँ

पुराण संहिता में कहा गया है कि परमधाम की आत्माओं के अन्दर नश्वर जगत् की दुःखमयी लीला को देखने के लिए, जो कभी भी इसके पहले उत्पन्न न होने वाली इच्छा थी, वह प्रियतम के साथ में रहने के कारण स्वभावतः पूरी नहीं हो सकी।

वह इच्छा उनके अन्दर बीज रूप से स्थित थी। सुख की वासना के लक्षणों से सम्बन्धित जीव ही संसार को प्राप्त हो सकते हैं। निश्चय ही जन्मजात संस्कार पूर्ण रूप से छूट नहीं पाते हैं। इसी प्रकार अक्षरातीत की प्रियायें भी खेल देखने की पहले वाली इच्छा से युक्त बनी रहीं। उसकी पूर्ति न होने से निजधाम में वे आत्मायें

जाग्रत न हो सकी। इसके पश्चात् पहले की तरह ही वह कालमाया उत्पन्न हुई तथा माया का वह ब्रह्माण्ड पुनः बन गया, जो पहले वाले ब्रह्माण्ड के स्वभाव, आकार, गुणों वाला, एवं उसी प्रकार विशाल है।

दुःख लीलावलोकाय योऽभूत्पूर्वं मनोरथः।

प्रियस्य साहचर्येण न सिद्धोऽभूत्स्वभावतः।।

स एव बीजरूपेण तस्यौ शिष्टो मुनीश्वर।

वासनालिङ्गसम्बद्धा जीवाः संसारमाप्नुयुः।।

सर्वथा न विमुच्यन्ते जन्मभाजो भवन्ति हि।

तथा कृष्णप्रियाः सर्वाः पूर्ववासनयान्विताः।।

तदपूर्त्या निजे धाम्नि न प्रबुद्धा मुनीश्वर।

ततः प्रादुरभूत्कालमाया पूर्ववदेव सा।।

तिरोहिता योगशक्तिः प्रपंचवः पुनरुत्थितः।

तत्स्वभावस्तदाकारतद्गुणस्तद्विधो महान।।

(पुराण संहिता ३१/२५-२९)

अपनी इच्छा के पूरी न होने के कारण अक्षरातीत की वे प्रियायें इस ब्रह्माण्ड में प्रगट होंगी। अपने परमधाम में कुछ समय तक सुषुप्त की तरह रहने के पश्चात् कालमाया के स्वप्न के ब्रह्माण्ड में पुनः अवतरित होंगी। २८वें कलियुग के प्रथम चरण में पुनः माया का खेल देखने की इच्छा शेष रह जाने के कारण, वे असहनीय दुःख के भोग को प्राप्त होंगी। वे अलग-अलग देशों में तथा ब्राह्मण आदि कुलों में पैदा होंगी। कुछ स्त्रियों का रूप धारण करेंगी, तो कुछ पुरुषों का।

तत्रावतीर्णाः कृष्णस्य प्रियास्ता वासनाबलात्।

किंचित्कालं निजपदे सुषुप्ताविव संस्थिताः।।

अष्टाविंशतिमे तस्य कलौ तच्चरणादि मे।

मनोरथावशेषस्य भोगमाप्स्यन्ति दुःसहम्।।

देशे देशे भविष्यन्ति ब्राह्मणादि कुलेष्वपि।

काश्चित्स्त्री रूपधारिव्यः पुरुषाअपि काश्चन।।

(पुराण संहिता ३१/३०,३३,३४)

अज्ञानता के अगाध सागर में प्रियाओं के गिर जाने पर प्रियतम परब्रह्म स्वयं अपने कृपा रूपी महासागर में स्नान करायेंगे, अर्थात् स्वयं प्रकट होकर अपने अलौकिक ज्ञान से उन्हें जाग्रत करेंगे।

आगाधाज्ञान जलधौ पतितासु प्रियासु च।

स्वयं कृपामहाम्भोधौ ममन्ज पुरुषोत्तमः।।

(पुराण संहिता ३१/५०)

पुराण संहिता के अध्याय ३१ श्लोक ५२–७० में दिये हुए संकेतों के आधार पर एक श्लोक की रचना होती है, जिसका भावार्थ यह है कि परमधाम की आत्मायें सुन्दरी और इन्दिरा (श्यामा जी और इन्द्रावती) जिन दो तनों में प्रकट होंगी, उनके नाम चन्द्र और सूर्य (देवचन्द्र और मिहिरराज) होंगे, तथा इनके अन्दर साक्षात् परब्रह्म विराजमान होकर लीला करेंगे, जिससे माया के अज्ञान रूपी अन्धकार का नाश हो जायेगा।

सुन्दरी चेन्दिरा सख्यौ नामाभ्यं चंद्रसूर्ययोः।

मायांधकारनाशाय प्रति बुद्धे भविष्यतः।।

बृहत्सदाशिव संहिता के अन्दर भी यही बात कही गयी है कि सच्चिदानन्द स्वरूप परब्रह्म की वे सखियाँ, जो व्रज और नित्य वृन्दावन की लीला में थीं, वे कलियुग में पुनः प्रकट होंगी और जाग्रत होकर पुनः अपने उस धाम में जायेंगी। चिद्घन स्वरूप परब्रह्म के आवेश से युक्त अक्षर ब्रह्म की बुद्धि अक्षरातीत की प्रियाओं को जाग्रत करने के लिये तथा सम्पूर्ण लोकों (१४ लोकों के इस ब्रह्माण्ड) को मुक्ति देने के लिये भारतवर्ष में प्रकट होगी। वह प्रियतम द्वारा स्वामिनी (श्यामा जी) के हृदय में स्थापित किये जाने पर चारों ओर फैलेगी। इस प्रकार परब्रह्म की प्रियायें उस परम ज्ञान को प्राप्त करके तथा जाग्रत होकर अपनी सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण कर लेंगी तथा परम आनन्द को प्राप्त होंगी।

आनन्दरूपाः या सख्या ब्रजे वृन्दावने स्थिताः।

कलौ प्रादुर्भविष्यन्ति पुनर्यास्यन्ति तत्पदम्।।

चिदावेशवती बुद्धिरक्षस्य महात्मनः।

प्रबोधाय प्रियाणां च कृष्णस्य परमात्मनः।।

मुक्तिदा सर्व लोकानां भविता भारताजिरे।

प्रसरिष्यति हृद्देशे स्वामिन्याः प्रभुणेरिता।।

एवं सम्प्राप्त विज्ञाना विनिद्रा ब्रह्मणः प्रियाः।

प्राप्स्यन्ति परमानन्दं परिपूर्ण मनोरथाः।।

(बृहत्सदाशिव संहिता १७,१८,१९,२०)

श्रीमद्भागवत् का यह कथन बृहत्सदाशिव संहिता के उपरोक्त कथन के बहुत अनुकूल है, जिसमें कहा गया है

कि शान्तनु के भाई देवापि तथा इक्ष्वाकु वंशीय राजा मरु इस समय कलाप ग्राम में स्थित हैं। वे दोनों महान योगबल से युक्त हैं। परमात्मा की प्रेरणा से वे दोनों कलियुग में पहले की भान्ति ही धर्म की स्थापना करेंगे।

देवापिः शांतनोर्भ्राता मरूश्चेक्ष्वाकुवंशज।

कलाप ग्राम आसाते महायोग बलान्वितौ।।

ताविहैत्य कलेरन्ते वासुदेवानुशिक्षितौ।

वर्णाश्रमयुतं धर्म पूर्ववत प्रथयिष्यतः।।

(श्रीमद्भागवत् १२/२/३७,३८)

इस कथन के साथ पुराण संहिता का वह पूर्वोक्त कथन भी सार्थक हो जाता है, जिसमें परब्रह्म को जिन दो तनों में लीला करनी है, उनके नाम चन्द्र और सूर्य

बताये गये हैं। दोनों में आत्मा श्यामा जी और इन्दिरा की होगी, तथा जीव देवापि और मरु का होगा। इस प्रकार वे दोनों तन इस कलियुग में श्री देवचन्द्र और श्री मिहिरराज (संस्कृत में मिहिर का अर्थ सूर्य होता है) हैं, जिनके अन्दर परब्रह्म ने लीला की। इसी कारण वे श्री निजानन्द स्वामी तथा श्री प्राणनाथ जी के रूप में प्रसिद्ध हुये।

भविष्योत्तर पुराण तथा भविष्य दीपिका ग्रन्थ में तो इनके प्रकटन का समय भी लिखा हुआ है–

"जब हिन्दू तथा मुसलमानों में परस्पर विरोध होगा तथा औरंगजेब का राज्य होगा, तब वि.सं. १७३८ का समय होगा। उस समय अक्षर ब्रह्म से भी परे सच्चिदानन्द परब्रह्म की शक्ति भारतवर्ष में इन्द्रावती आत्मा के अन्दर

विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप में प्रकट होगी। वे चित्रकूट के रमणीय वन के क्षेत्र (पद्मावती पुरी, पन्ना) में प्रकट होंगे।"

परस्परं विरोधे च अवरङ्गख्योः भवद्यदा।

विक्रमस्य गतेऽब्दे सप्तदशाष्ट त्रिकं यदा।

तदायं सच्चिदानन्दोऽक्षरात्परतः परः।।

भारते चेन्दिरायां स बुद्धः आविर्भविष्यति।

स बुद्धः कल्कि रूपेण क्षात्र धर्मेण तत्परः।

चित्रकूटे वने रम्ये स वै तत्र भविष्यति।।

(भविष्योत्तर पुराण उ. ख. अ. ७२ ब्रह्म प्र.)

शालिवाहन शाकात् तु गत षोडशकं शतम्।

जीवोद्धाराय ब्रह्माण्डे कल्किः प्रादुर्भविष्यति।।

(भविष्य दीपिका अध्याय ३)

इस सम्बन्ध में सिख पन्थ के "पुरातन सौ साखी" (भविष्य की साखियाँ) ग्रन्थ के पृष्ठ ६५–६६ पर स्पष्ट लिखा है–

नेह कलंक होय उतरसी, महाबली अवतार।

संत रक्षा जुग जुग करे, दुष्टां करे संहार।।

नवां धरम चलावसी, जग में होवन हार।

नानक कलजुग तारसी, कीर्तन नाम आधार।।

वि.सं. १७३८ का समय वही है, जो शाका सालिवाहन के १६०० वर्ष पूर्ण होने का है। भविष्य

दीपिका ग्रन्थ का कथन है कि सालिवाहन शाका के १६०० वर्ष व्यतीत हो जाने पर सम्पूर्ण जीवों के उद्धार के लिये इस ब्रह्माण्ड में "कल्कि" का आगमन होगा।

हिन्दू धर्मग्रन्थों में जो समय वि.सं. १७३८ और शक सम्वत् १६०० का है, वही समय हिजरी सन् १०९० का है। कुरान–हदीसों के अनुसार परब्रह्म अल्लाह तआला के इमाम महदी के रूप में प्रकटन का भी वही समय है–

"अल्लाह मुर्दों को कयामत के दिन उठायेगा और फिर सभी उसी की तरफ जायेंगे।"

ब्लमौता यब् असुहुमुल्लाह सुम्मअिलैहि युर्ज अुन।

(मंजिल २ पारा ७ सूरा ६ आयत ३६)

इस आयत में शरीर को कब्र कहा गया है। जब

इमाम महदी इल्म–ए–लदुन्नी लायेंगे, तो जीव भी जाग्रत होकर अपनी और खुदा की पहचान कर लेंगे। इसी को कब्रों से मुर्दों का उठना कहते हैं। कयामत के समय अल्लाह के आने पर ही यह सम्भव हो सकेगा। इस प्रकार कयामत का समय मालूम होने पर इमाम महदी के स्वरूप में आने वाले खुदा का समय भी स्पष्ट हो जायेगा।

अल्लाह की तरफ से जिब्रील द्वारा कहा गया–

"ये काफिर तुमसे पूछते हैं कि बताओ! अगर तुम सच्चे हो, तो यह कयामत का वादा कब पूरा होगा? कह दो तुम्हारे साथ एक दिन का वादा है।"

व यकूलून मत्ता हाजल्वऽदुअिन् कुन्तुम सादिकीन।

कुल लकुम मीआदुयौमिल्ला तसत् अखिरून अन हु साआतौंव ला तस्त क्दिमन।

(मंजिल ५ पारा २२ सूरा ३४ आयत २९,३०)

यहाँ यह स्पष्ट है कि कयामत कल (फरदा रोज़) को होगी, "और ऐ पैगम्बर! तुमसे सजा की जल्दी मचा रहे हैं (कि कहाँ है तुम्हारा खुदाई अजाब?) और अल्लाह तो कभी भी वादा खिलाफी नहीं करेगा और कुछ शक नहीं कि तुम्हारे परवरदिगार के यहाँ का एक दिन तुम लोगों की गिनती के अनुसार १००० वर्ष के बराबर है।"

वयस्तऽजिलूनक बिल अजाबि व लैयुखलि फल्लाहु वऽदहु त व अिन्न यौमन् अिन्द रब्बिक कअल्कि सनतिम्मिम्मा तअुछून।

(मंजिल ४ पारा १७ सूरा २२ आयत ४७)

दुनिया के १०० वर्षों के बराबर खुदा की एक रात होती है।

अर्थात् १००० + १०० = ११०० वर्ष

इस प्रकार क़ुरआन के कथनानुसार ११वीं सदी में इमाम महदी अल्लाह तआला का प्रकट होना सिद्ध होता है।

मुकम्मल सही बुखारी हजरत इमाम सफा ६६४/९ में भी कहा गया है– "कयामत के दिन तुम अपने अल्लाह का दीदार करोगे और कोई दिक्कत नहीं होगी।"

क़ुरआन में कयामत के सात निशानों में से एक निशान यह भी है कि इमाम महदी के साथ जाग्रत बुद्धि का फरिश्ता इस्राफील तथा हुक्म की शक्ति भी होगी।

यही बात बाइबल में भी कही गयी है कि एक शक्तिशाली शोर तथा सबसे बड़े हुकम के फरिश्ते और

(परमात्मा की) महान तुरही से युक्त आत्मा को झकझोरने वाली तेज आवाज के साथ परब्रह्म अपने परमधाम से स्वयं आयेंगे और विश्वास करने वाले वे लोग, जो मर चुके हैं, परब्रह्म से मिलने के लिये सबसे पहले उठेंगे।

For the Lord himself will come down from heaven with a mighty shout and with the soul stirring cry of the archangel and the great trumpet call of God. And the believers who are dead will be the first to rise to meet the Lord.

(Bible – Thessalonians 4 : 16)

बाइबल के इस कथन में जाग्रत बुद्धि के फरिश्ते

इस्राफिल को परब्रह्म की तुरही कहा गया है, अर्थात् Supreme Truth God (श्री प्राणनाथ जी) जब इस दुनिया में आयेंगे तो उनके साथ आत्मा को झकझोरने वाला निजबुद्धि का ज्ञान, हुकम की शक्ति, तथा इस्राफिल फरिश्ता होगा। मरे हुए लोगों के दोबारा जीवित होने का यह अर्थ है कि परब्रह्म के दिये हुए जाग्रत ज्ञान को पाकर वे अपनी तथा अक्षरातीत परब्रह्म की वास्तविक पहचान कर लेंगे।

Supreme Truth God के साथ इस्राफिल तथा हुक्म की शक्ति होने से यह स्पष्ट होता है कि बाइबल के अनुसार भी परब्रह्म के इस नश्वर जगत में प्रकट होने का वही समय वि.सं. १७३५ या ग्यारहवीं सदी १०९० हिज़री है, जो हिन्दू धर्मग्रन्थों तथा क़ुरआन में लिखा है।

❖❖❖❖❖

१८. सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी का प्रकटन

धर्मग्रन्थों के कथनानुसार कलाप ग्राम निवासी देवापि के जीव ने वि.सं. १६३८ में आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को मारवाड़ उमरकोट गाँव में श्री देवचन्द्र के रूप में जन्म लिया। इनके पिता का नाम श्री मत्तु मेहता तथा माता का नाम कुँवर बाई था। परमधाम की श्यामा जी (परब्रह्म के आनन्द अंग) ने इनके तन में प्रवेश किया।

जब श्री देवचन्द्र जी की उम्र मात्र ११ वर्ष की थी, तभी से उनके मन में यह जानने की प्रबल जिज्ञासा उत्पन्न हो गयी कि मैं कौन हूँ, कहाँ से आया हूँ, तथा मेरी आत्मा का प्रियतम कौन है? इन प्रश्नों का समाधान

पाने के लिये उन्होंने बहुत प्रयास किया, किन्तु स्पष्ट उत्तर नहीं मिल पाया। कुछ समय के पश्चात् उमरकोट से कच्छ के लिये जाने वाली बारात के पीछे–पीछे चलते समय परब्रह्म ने दर्शन देकर यथेष्ठ स्थान पर पहुँचा दिया, किन्तु वे उनको पहचान नहीं पाये।

कच्छ में अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिये वे अनेक ज्ञानियों, सन्यासियों, वैरागियों आदि के पास गये। उनके बताये हुए मार्ग के अनुसार उन्होंने साधना भी की, लेकिन उन्हें सन्तोष नहीं हुआ। अन्त में राधा –वल्लभ मत के अनुयायी हरिदास जी के सान्निध्य में रहकर वे सेवा–ध्यान करने लगे। हरिदास जी ने उन्हें दीक्षा भी दे दी। २६ वर्ष की उम्र में ध्यान द्वारा दूसरी बार उन्हें परब्रह्म का साक्षात्कार हुआ।

इसके पश्चात् हरिदास जी की प्रेरणा से वे नवतनपुरी

(जामनगर) आकर कान्ह जी भट्ट से श्रीमद्भागवत् की कथा सुनने लगे। जब उनकी उम्र ४० वर्ष की हो गयी, तो श्याम जी के मन्दिर में कथा सुनते समय साक्षात् परब्रह्म ने उन्हें दर्शन दिया। परब्रह्म ने उन्हें परमधाम के इश्क–रब्द, व्रज एवं रास लीला, तथा जागनी ब्रह्माण्ड की सारी बातें बतायी और उनके धाम हृदय में आवेश स्वरूप से विराजमान हो गये।

इस घटना के पश्चात् श्री देवचन्द्र जी "निजानन्द स्वामी" के रूप में प्रसिद्ध हो गये तथा उनके अलौकिक ब्रह्मज्ञान की चर्चा सुनने के लिये जनसमूह उमड़ पड़ा। उनके द्वारा दिये हुए तारतम्य ज्ञान का अनुसरण करने वाले सुन्दरसाथ कहलाये। सुन्दरसाथ के समूह में हरिदास जी भी थे, जिन्होंने पहले श्री देवचन्द्र जी को मन्त्र–दीक्षा दी थी।

१९. श्री महामति जी का प्रगटन

पूर्व वर्णित धर्मग्रन्थों के कथनानुसार राजा मरु ने जामनगर राज्य के मन्त्री (दीवान) श्री केशव ठाकुर एवं धनबाई के सुपुत्र श्री मिहिरराज के रूप में जन्म लिया। इनका जन्म वि. सं. १६७५ में भादो मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को हुआ था। श्री मिहिरराज के तन में परमधाम की इन्द्रावती (इन्दिरा) आत्मा ने प्रवेश किया, जिन्हें बाद में "महामति" की शोभा मिली तथा इनके धाम हृदय में विराजमान होकर परब्रह्म ने लीला की।

श्री मिहिरराज लगभग १२ वर्ष की उम्र में सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी की शरण में आये तथा उनसे तारतम ज्ञान ग्रहण किया। श्री निजानन्द स्वामी (सद्गुरू

धनी श्री देवचन्द्र जी) ने उन्हें देखते ही पहचान लिया कि भविष्य में परब्रह्म की लीला इसी तन के द्वारा होगी। श्री मिहिरराज के तीन बड़े भाई हरिवंश, सांवलिया, गोवर्धन थे और छोटे भाई का नाम उद्धव ठाकुर था।

श्री मिहिरराज बचपन से ही इतनी अधिक अलौकिक प्रतिभा के स्वामी थे कि जामनगर में भागवत् के सबसे बड़े विद्वान कान्ह जी भट्ट उनके इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाये कि महाप्रलय के पश्चात् परब्रह्म का स्वरूप कहाँ रहता है। भट्ट जी ने स्पष्ट रूप से कह दिया था कि इसका उत्तर ब्रह्मा जी के पास भी नहीं है।

कुछ समय के पश्चात् परमधाम के दर्शन हेतु श्री मिहिरराज जी ने इतनी कठोर साधना की कि उनका शरीर जीर्ण–शीर्ण हो गया, लेकिन उन्होंने परमधाम की एक झलक पा ही ली। तदन्तर श्री निजानन्द स्वामी ने

उन्हें सेवा कार्य हेतु अरब भेज दिया, जहाँ वे लगभग ५ वर्षों तक रहे। वापस आने पर कुछ कारणवश उन्हें श्री निजानन्द स्वामी का सान्निध्य प्राप्त न हो सका।

वि. सं. १७१२ में सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी का धामगमन (देह त्याग) हो गया। इसके पूर्व उन्होंने श्री मिहिरराज जी को बुलाकर भविष्य की सारी बातें बता दीं कि भविष्य में जागनी लीला तुम्हारे तन से होगी। सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के धामगमन के पश्चात् श्री मिहिरराज ने धर्म प्रचार का उत्तरदायित्व सम्भाला।

❖❖❖❖❖

२०. परब्रह्म के रूप में शोभा

श्री मिहिरराज जी ने आत्म–जाग्रति हेतु सब सुन्दरसाथ को एकत्रित करने की योजना बनाई, किन्तु जामनगर के वजीर के यहाँ झूठी चुगली के कारण हब्सा में नजरबन्द होना पड़ा। यहाँ अपने प्रियतम के विरह में तड़प–तड़प कर उन्होंने अपने शरीर को मात्र हड्डियों का ढाँचा बना दिया। अन्ततोगत्वा सच्चिदानन्द परब्रह्म को उन्हें दर्शन देकर उनके धाम हृदय में विराजमान होना पड़ा। अब सबने उन्हें प्राणनाथ, धाम धनी, श्री राज, श्री जी आदि कहना शुरु कर दिया, क्योंकि इन शब्दों का अर्थ होता है अक्षरातीत। उपनिषदों का यह कथन "ब्रह्मविदो ब्रह्मोव भवति" भी उस समय पूर्ण रूप से सार्थक हो उठा।

अब उनके तन से परब्रह्म के आवेश स्वरूप द्वारा "श्रीमुखवाणी" का अवतरण होना शुरु हो गया। सबसे पहले "रास" ग्रन्थ उतरा, जिसमें महारास की अखण्ड लीला तथा परब्रह्म द्वारा धारण किये गये युगल स्वरूप की शोभा का वर्णन है। इसके पश्चात् "प्रकाश" और "खटऋतु" ग्रन्थ उतरा। परमधाम की आत्माओं की जागनी हेतु समय-समय पर भिन्न-भिन्न स्थानों पर आवश्यकतानुसार वाणी उतरती रही। खिलवत, परिक्रमा, सागर, श्रृंगार, तथा सिन्धी के ग्रन्थ में परमधाम का आनन्द उड़ेला गया है। सनंध, खुलासा, मारफत सागर, तथा कयामतनामा में कुरआन के हकीकत एवं मारिफत के भेदों को स्पष्ट किया गया है, जिससे शरीयत के नाम पर होने वाले हिन्दू-मुस्लिम के विरोध को मिटाकर शान्ति का मार्ग प्रशस्त किया जा

सके। किरन्तन ग्रन्थ सम्पूर्ण वाणी का संक्षिप्त रूप है, जिसमें वेद–वेदान्त तथा भागवत आदि के गूढ़ एवं अनसुलझे प्रश्नों का समाधान किया गया है। कलश ग्रन्थ में भी हिन्दू धर्मग्रन्थों के रहस्यों को बहुत अच्छी तरह से प्रकट किया गया है।

वस्तुत: श्री प्राणनाथ जी के मुखारविन्द से अवतरित होने वाली ब्रह्मवाणी की महत्ता को वही समझ सकता है, जो सम्पूर्ण वेद–वेदांग तथा कतेब ग्रन्थों में डुबकी लगाते–लगाते थक गया हो किन्तु यथार्थ सत्य को जानने का सच्चा जिज्ञासु हो।

❖❖❖❖❖

२१. जागनी अभियान

अब श्री प्राणनाथ जी परमधाम की आत्माओं को जाग्रत करने हेतु देश–विदेश में भ्रमण करने लगे। यात्रा की कठिनाइयाँ होते हुए भी भारतवर्ष के कई प्रान्त गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, सिन्ध, तथा अरब देशों में भी उन्होंने परमधाम के अलौकिक ब्रह्मज्ञान का रस बरसाया।

सर्वप्रथम वि. सं. १७१८ में उन्होंने जूनागढ़ के शास्त्रार्थ महारथी "हरजी व्यास" को अपने अलौकिक ज्ञान से नतमस्तक किया। भागवत् के इस एक प्रश्न का उत्तर हरजी व्यास नहीं दे सके थे कि अक्षर ब्रह्म का वह अखण्ड निवास (महल) कहाँ है?

इसके पश्चात् श्री प्राणनाथ जी दीव बन्दर, कच्छ, मण्डई, कपाइये, भोजनगर में आत्माओं को जाग्रत करते हुए ठट्ठानगर आये, जहाँ कबीर पन्थ के आचार्य चिन्तामणि जी शिष्यों सहित जाग्रत हुए, जिनके एक हजार शिष्य थे। इसके पश्चात् सेठ लक्ष्मण दास भी जाग्रत हुए, जिनका ९९ जहाजों से व्यापार हुआ करता था। ये ही बाद में श्री लालदास जी के रूप में प्रसिद्ध हुए।

इसके पश्चात् श्री जी (श्री प्राणनाथ जी) अरब देशों में गये, जहाँ उन्होंने मस्कत बन्दर तथा अबासी बन्दर में सैकड़ों आत्माओं को जाग्रत किया। अबासी बन्दर में धन, माँस, और शराब में डूबे रहने वाले भैरव ठक्कर जैसे व्यक्ति ने भी श्री जी की कृपा दृष्टि से परब्रह्म का साक्षात्कार कर लिया।

वि. सं. १७२८ में श्री प्राणनाथ जी अरब से वापस

भारत ठट्ठानगर (वर्तमान कराची) आ गये। इसके पश्चात् सूरत में सत्रह माह रहे, जिसमें श्याम भाई जैसे वेदान्त के आचार्य एवं गोविन्दजी व्यास सहित सैंकड़ों लोगों ने अपनी अध्यात्मिक प्यास बुझायी। सूरत से ही बहुत से सुन्दरसाथ ने अपना घर–द्वार हमेशा के लिये छोड़ दिया और श्री प्राणनाथ जी के साथ जागनी अभियान पर निकल पड़े।

सूरत से सिद्धपुर होते हुए श्री प्राणनाथ जी मेड़ता पहुँचे। वहाँ मुल्ला के मुख से बाँग सुनकर उन्होंने हिन्दू–मुस्लिम मतों का एकीकरण करने का दृढ़ संकल्प किया। औरंगज़ेब को कुरआन के हकीकत और मारिफत के ज्ञान द्वारा शरीयत से दूर करने के उद्देश्य से वे दिल्ली पहुँचे, किन्तु भेंट न होने के कारण वार्ता न हो सकी। पुनः दिल्ली से वि. सं. १७३५ में वे हरिद्वार के महाकुम्भ

में सम्मिलित हुए, जहाँ वैष्णवों के चारों सम्प्रदायों, दश नाम सन्यास मत, तथा षट् दर्शन के आचार्यों के साथ उनका शास्त्रार्थ हुआ। जिसमें सभी ने हार मानकर उन्हें "श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक" मानकर उनके नाम की ध्वजा फहराई तथा बुद्ध जी का शाका भी प्रचलित किया।

हरिद्वार से श्री जी पुन: दिल्ली आये और औरंगज़ेब को कियामत के जाहिर होने का सन्देश भिजवाने का प्रयास किया गया। दिल्ली से अनूपशहर आते समय सनन्ध की वाणी भी उतरी। दिल्ली में १२ सुन्दरसाथ को औरंगज़ेब के पास भेजा, किन्तु बादशाह के अधिकारियों ने उन १२ सुन्दरसाथ के साथ बहुत ही कष्टदायक व्यवहार किया, जबकि बादशाह ने उन्हें सम्मानपूर्वक रखने को कहा था।

इसके पश्चात् श्री प्राणनाथ जी ने औरंगज़ेब के अत्याचार का विरोध करने के लिये उदयपुर, औरंगाबाद, रामनगर आदि के राजाओं को जाग्रत करने का प्रयास किया, किन्तु परमधाम का अँकुर न होने के कारण कोई जाग्रत न हो सका। निदान श्री जी पद्मावतीपुरी धाम पन्ना आये, जहाँ महाराजा छत्रसाल जी ने उन्हें पूर्णब्रह्म का स्वरूप मानकर आरती उतारी तथा अपना तन, मन, धन उन पर न्योछावर कर दिया। श्री प्राणनाथ जी की कृपा दृष्टि से पन्ना की धरती हीरा उगलने लगी और ५२ युद्धों में महाराजा छत्रसाल जी ने विजय प्राप्त की। इस समय तक लगभग ५००० की संख्या में ऐसे सुन्दरसाथ थे, जो अपना घर–द्वार छोड़कर श्री जी के चरणों में समर्पित हो चुके थे, और रात–दिन अलौकिक ब्रह्मज्ञान की चर्चा के रस में डूबे रहते थे।

२२. वेद–कतेब का एकीकरण

विचारों की विभिन्नता के कारण ही आज का मानव, धर्म की ओट में एक–दूसरे के रक्त का प्यासा हो जाता है। यदि हम सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो सभी प्राणियों के अन्दर एक जैसी ही चेतना कार्यशील है। सारे धार्मिक संघर्ष के मूल में विचारों, भेष, और भाषा की भिन्नता ही मूल कारण होती है। आत्मिक दृष्टि खुल जाने पर तो सारी पृथ्वी ही अपना परिवार प्रतीत होती है। तारतम्य ज्ञान की दृष्टि से सभी मुख्य मतों का एकीकरण संक्षेप में इस प्रकार है–

हिन्दू पक्ष	कुरआन पक्ष	बाइबल पक्ष
तीन सृष्टि	तीन उम्मत	1. Living creatures 2. Cobtives 3. Sheep
चौदह लोक	चौदह तबक	Fourteen realms
एक परब्रह्म	एक हक	The Lord (ssalonians)
विष्णु जी	अजाजील	Operator
ब्रह्मा जी	मैकाइल	Generator
परब्रह्म का जोश	जिबरील (तफ्सीर हुसैनी	Gabriel (Luke 1/19)

	पृष्ठ ४४४)	
शिव जी	अज़राइल	Destructor
वैकुण्ठ	मलकूत	
मोह तत्त्व	अन्धेरी पाल	Slam–bor
अक्षर ब्रह्म	नूरजलाल	Great God King (Psalm 95/3)
अक्षरातीत	नूरजमाल	
ब्रह्मसृष्टि	मोमिन	The meeb (Isaiah 61/1)
कुमारिका	फरिश्ते	
अक्षर धाम	सदर–तुल–मुंतहा	Kingdom of God

		(Matthew 13/4)
परमधाम	अर्श–ए–अजीम	Own Land (Jeremiah 42/12)
श्यामा जी	रूह अल्लाह	Consort of God (Isaiah 62/2)
कृष्ण जी	मुहम्मद	
परमधाम की सखियाँ	दरगाह की रूहें	
जाग्रत बुद्धि	इस्राफील	Archangel (Matthew

		24/31)
विजयाभिनन्द बुद्ध	आखरूल जमां इमाम महदी	
कंस ने जेल में वसुदेव–देवकी को रखा तथा अपने भानजों का वध किया	नूह पैगम्बर काफर की बन्ध में रहे और काफर ने उनके बेटों को मारकर बहुत कष्ट दिया	
वैकुण्ठ से विष्णु भगवान ने आकर वसुदेव–देवकी को दर्शन दिया,	मलकूत से फरिश्ता आया, उसने नूह पैगम्बर को सान्त्वना	

उनकी सिखापन के अनुसार वसुदेव जी श्री कृष्ण जी को नन्द जी के घर पहुँचा आये	देकर समझाया, उनकी सिखापन के अनुसार नूह पैगम्बर अपने पुत्र साम को सुरक्षित स्थान पर पहुँचा आये	
व्रज में अहीर जाति में नन्द जी तथा कल्याण जी मुखिया थे	महत्तरों की कौम में हूद और कील मुखिया थे	
इन्द्र ने क्रोधपूर्वक सात	हूद नबी के घर सात रात तथा	And the hail smote

रात तथा आठ दिन तक व्रज में घोर वर्षा की, श्री कृष्ण जी ने गोवर्धन पर्वत के नीचे सम्पूर्ण गोकुलवासियों को लाकर सुरक्षित कर दिया, प्रलय का जल व्रज में प्रवेश न कर सका	आठ दिन तक भयंकर तूफान चलता रहा, कोहतूर पर्वत के नीचे रूहों की सुरक्षा हुई और सभी काफर डूब मरे, यह वर्णन कुरान के पारा २९ सूरत ६९ आयत में वर्णित है	through out all the land of Egypt all that was in the field, both man and beast, and the hail smote off every herb of the field. (Exodus 9/25)
योगमाया रूपी	नूह पैगम्बर की	And every

नौका में सखियों को लेकर श्री कृष्ण जी गये तथा उनके साथ रास लीला की, शेष सारे ब्रह्माण्ड का प्रलय हो गया	किश्ती में चढ़े हुए मोमिनों को उनके बेटे श्याम ने बचा लिया और शेष दुनिया को डुबो दिया, यह प्रसंग कुरान के पारा १९ आयत ११९,१२० तथा पारा ८ आयत ३४ में वर्णित है	living substance was destroyed which was upon the face of the ground, both man and cattle and the creeping things and the fowl of the heaven

		and they were destroyed from the earth and Noha only remained alive (Genesis 7/23)

❖❖❖❖❖

२३. हरिद्वार का शास्त्रार्थ

वि.सं.१७३५ में हरिद्वार के महाकुम्भ में श्री प्राणनाथ जी सुन्दरसाथ के साथ पहुँचे। वहाँ पर वैष्णवों के चारों सम्प्रदायों, दश नाम सन्यास मत, तथा षट दर्शनों के आचार्यों के साथ श्री जी का शास्त्रार्थ हुआ। वैष्णव के आचार्यों तथा दश नाम सन्यास मत की सातों मन्याओं के आचार्यों ने अपना तथा अपने आराध्य का धाम, इष्ट, मुक्ति का स्वरूप और स्थान, सुख विलास का स्थान, सभी कुछ नश्वर जगत के अन्दर (१४ लोक, निराकार तक) बताया। केवल निम्बार्क तथा छठी मन्या ने थोड़ी बहुत अखण्ड की बात की। श्री जी ने पूछा कि महाप्रलय में जब १४ लोक, निराकार–मोहतत्व तक का लय हो जायेगा, तब आपका धाम, ब्रह्म का स्वरूप, तथा

मुक्ति का स्थान कहाँ रहेगा? सभी आचार्यों के पास श्री जी के इस प्रश्न का कोई भी उत्तर नहीं था।

न्याय दर्शन के आचार्यों ने कहा कि दु:ख की २१ सीढ़ियों (५ इन्द्रिय + मन, छ: इन्द्रियों के विषय, छ: प्रकार के विषयों का ज्ञान, सुख, दु:ख, तथा शरीर) के नाश होने पर अखण्ड सुख की प्राप्ति होती है।

श्री प्राणनाथ जी ने कहा कि महाप्रलय में जब यह स्थूल जगत या शरीर ही नहीं रहेगा, तब उस अनादि ब्रह्म तथा जीव का निवास कहाँ होगा? इस पर उन्हें मौन होना पड़ा।

मीमांसा दर्शन के आचार्यों ने कहा कि कर्म अनादि और अद्वितीय है। इसके बिना और कुछ है ही नहीं।

श्री जी ने कहा– कर्म में सदा भ्रान्ति रहती है ,

जबकि ब्रह्म अखण्ड, एकरस स्वरूप वाला है। जीव के अहंकार तथा मन के संकल्प–विकल्प के कारण कर्म की उत्पत्ति होती है। जहाँ पर ब्रह्म का अखण्ड स्वरूप है, वहाँ पर मन की गति नहीं है। इसलिये ब्रह्म के स्वरूप में कर्म की स्थिति का प्रश्न नहीं है। ब्रह्मज्ञान प्राप्त हो जाने पर कर्म–बन्धन भी समाप्त हो जाते हैं। आपका आशय जैमिनि के कथनों के विपरीत है। इस पर वे मौन हो गये।

मीमांसकों के शान्त होने पर सांख्य दर्शन के विद्वानों ने कहा कि जब पुरुष तथा प्रकृति का संयोग होता है तब जगत की उत्पत्ति होती है, तथा अलगाव होने पर महाप्रलय हो जाता है, दोनों ही नित्य एवं अनादि हैं।

श्री प्राणनाथ जी ने पूछा कि पहले आप यह बताइये कि प्रकृति और पुरुष का स्वरूप क्या है? यदि निराकार

है, तो ये कहाँ पर और कैसे मिलते हैं? महाप्रलय के पश्चात् प्रकृति का स्वरूप कहाँ रहता है? इस बात पर उन्हें मौन होना पड़ा।

वैशेषिक दर्शन के आचार्यों ने कहा कि सारे जगत की उत्पत्ति तथा लय का मूल काल है। अत: यह ही ब्रह्म है।

श्री जी ने कहा कि जहाँ पर ब्रह्म का अखण्ड स्वरूप है, वहाँ पर काल की सत्ता नहीं होती, जबकि यह सम्पूर्ण जगत काल के अधीन है। जगत के स्वरूप और ब्रह्म के स्वरूप को एक–दूसरे में ओत–प्रोत मानना आपकी भूल है।

योग दर्शन के आचार्यों ने कहा कि सर्वव्यापक होने के कारण इस शरीर में ही ब्रह्म का दर्शन हो जाता है।

योग के अंगों के अनुष्ठान तथा नाड़ी–चक्र शोधन द्वारा उस ज्योतिर्मय ब्रह्म का साक्षात्कार होता है। उस ब्रह्म में यह जगत् किरणों के समान स्थित है।

श्री प्राणनाथ जी ने कहा कि वेद, उपनिषद में तो मात्र परमगुहा, एकादश द्वार में ही ब्रह्म के साक्षात्कार का वर्णन है, जबकि योग दर्शन में परमगुहा से सम्बन्धित कोई भी सूत्र नहीं है। ब्रह्म और मायावी जगत् की तुलना सूर्य तथा उसकी किरणों से करना गलत है , क्योंकि दोनों (ब्रह्म तथा जगत्) ही विपरीत गुणों वाले हैं, जबकि सूर्य की किरणें उसका ही स्वरूप कही जाती हैं।

नवीन वेदान्तियों ने कहा– ब्रह्म की तरह माया भी अनादि है और उसी के अन्दर रहती है। यह सारा जगत ब्रह्मरूप है। अद्वितीय ब्रह्म के अतिरिक्त किसी अन्य को देखना बहुत बड़ी अज्ञानता है। इच्छारहित वह ब्रह्म

सबसे अलग है।

श्री जी ने कहा कि हे वेदान्त के आचार्यों! आप यह बताइये कि त्रिगुणातीत ब्रह्म के अन्दर माया किस प्रकार से है तथा इस मायावी जगत् के अन्दर एकरस ब्रह्म किस प्रकार व्यापक है? यदि माया अनादि है, तो वह साकार है या निराकार, इसे स्पष्ट करें? यदि यह सारा जगत ही ब्रह्मरूप है, तो ज्ञान के ग्रन्थों की आवश्यकता ही क्या है? वेदान्त के आचार्यों के पास श्री प्राणनाथ जी के इन तर्कों का कोई प्रामाणिक उत्तर नहीं था।

निदान, सभी ने हार मानकर उन्हें "श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप" माना और उनके नाम की ध्वजा फहराई तथा आरती उतारी।

❖❖❖❖❖

२४. ब्रह्ममुनियों की पद्धति

हरिद्वार के इस शास्त्रार्थ में श्री प्राणनाथ जी ने ब्रह्ममुनियों की जो पद्धति बतायी, वह माहेश्वर तन्त्र के अन्तर्गत वर्णित है, जो इस प्रकार है–

भगवान शिव पार्वती जी से कहते हैं–

"हे सुन्दरी! ब्रह्मानन्द रस को जानने वाली तथा ब्रह्मज्ञानियों में सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मसृष्टियों की पद्धति को मैं तुमसे कहता हूँ, उसे सुनो। निश्चय ही गोत्र चिदानन्द कहा गया है। आनन्दमय परब्रह्म ही सदगुरु हैं। शिखा ज्ञानमयी कही गयी है और सूत्र अक्षर ब्रह्म है। किशोर स्वरूप वाली परब्रह्म की आह्लादिनी शक्ति श्यामा जी ही इष्ट हैं और पुरुषोत्तम अक्षरातीत पूज्यनीय हैं जिनको

पाने का एकमात्र साधन पतिव्रता साधन है। नित्य वृन्दावन ही सुख विलास का स्थान माना गया है। परब्रह्म के युगल स्वरूप का जप एवं मन्त्र तारतम्य कहा गया है। ब्रह्मविद्या ही देवी है तथा पूर्ण ब्रह्म ही सनातन देव हैं। गोलोक को शाला तथा अखण्ड का द्वार कहा गया है। स्वसं वेद (आत्मवेद) तारतम वाणी ही वेद है, जिसके अनुकरण का फल अखण्ड में नित्य विहार है। बेहद से परे दिव्य ब्रह्मपुर ही धाम है। सदगुरु (परब्रह्म) के चरण ही क्षेत्र हैं, जो सबको शुद्ध करने वाले हैं। परमधाम की अखण्ड यमुना जी ही तीर्थ हैं। एकमात्र अनन्य प्रेम लक्षणा भक्ति ही मान्य है। महाविष्णु ही ऋषि हैं। सभी शास्त्रों के अद्भुत साररूप श्रीमद्भागवत् (रास) का श्रवण करना माना गया है। जाग्रत स्वरूप वाला ज्ञान (श्री प्राणनाथ प्रणीत) ही ग्राह्य है। परमधाम में परब्रह्म का

आनन्द स्वरूप ही कुल (वंश) है, जिनके अंग रूप सभी ब्रह्ममुनि हैं। परब्रह्म की आनन्द स्वरूपा आत्माओं द्वारा प्रकाशित किया हुआ सम्प्रदाय चिदानन्द (निजानन्द) है। इस प्रकार ब्रह्मसृष्टियों की यह "पुरुषोत्तम" नामक पद्धति कही गयी है। हे सुन्दरी! अपने निज स्वरूप के साक्षात्कार के लिये इस पद्धति के अनुसार आचरण करना चाहिए।"

❖❖❖❖❖

ब्रह्मानन्दरसज्ञानां ब्रह्मज्ञानवतां सतां।

पद्धतिं ब्रह्मसृष्टीनां वदयामि श्रृणु सुन्दरि।।१।।

गोत्रमुक्तं चिदानन्दं ब्रह्मानन्दो हि सदगुरू:।

शिखा ज्ञानमयी प्रोक्ता सूत्रमक्षररूपकम्।।२।।

किशोरी परमेष्टा च सेवनं पुरूषोत्तमम्।

पातिव्रत्य मनन्यत्वं साधनं समुदाहृतम्।।३।।

वृन्दावनं नित्यमक्तं विलासं सुखासञ्ज्ञकम्।

जाप्यं च युगलं नाम तारतम्यो मनु: स्मृत:।।४।।

ब्रह्म विद्या देवी देवो ब्रह्म सनातनम्।

शाला गोलोक इत्युक्तो द्वार मूर्ध्वमुदाहृतम्।।५।।

स्वसंवेद समादिष्ट: फलं नित्यविहारकम्।

दिव्य ब्रह्मपुरं धाम परात्परमुदाहृतम्।।६।।

सद्गुरोश्चरणं क्षेत्रं सर्व शुद्धि करं परं।

यमुना संज्ञकं तीरं मननं प्रेम लक्षणं।।७।।

श्रीमद्भागवतं प्रोक्तं श्रवणं सारमद्भुतम्।

ऋषि: प्रोक्तो महाविष्णु: ज्ञानं जागृत्स्वरूपकम्।।८।।

आनन्दाख्यं कुलं प्राप्तं नित्ये धाम्नि प्रकीर्तितम्।

सम्प्रदायश्चिदानन्दो निजानन्दै: प्रकाशित:।।९।।

एवं पद्धतिराख्याता पुरूषोत्तम संजिका।

वर्तितव्यं ततो भद्रे साधनेरात्मलब्धये।।१०।।

माहेश्वर तन्त्र २८/४५-५४

२५. औरंगज़ेब को जाग्रत करने का प्रयास

उस समय लगभग सम्पूर्ण देश पर औरंगज़ेब का शासन था। वह इस्लाम की ओट में जबरन धर्मान्तरण करवाने पर तुला हुआ था। यद्यपि औरंगज़ेब कुरआन का बहुत बड़ा विद्वान था, फिर भी शरीयत के काज़ियों के दबाव में वह हिन्दुओं के प्रति बहुत अधिक घृणा का भाव रखता था।

कुछ समय तक औरंगज़ेब के अधिकारियों के माध्यम से बादशाह से मिलने का प्रयास किया गया, किन्तु सफलता नहीं मिली। अन्त में बारह सुन्दरसाथ (लालदास, शेख बदल, भीम भाई, चिन्तामणि, खिमाई भाई, चंचलदास, नागजी भाई, सोमजी भाई, कायम

मुल्ला, दयाराम, बनारसी, गंगाराम) मुस्लिम फकीरों के वेश में जामा मस्जिद में जाकर सनन्ध (वाणी) गाने लगे। जामा मस्जिद के शाही इमाम ने उनकी भेंट औरंगज़ेब बादशाह से करवा दी।

इन सुन्दरसाथ ने बादशाह से कियामत के प्रकट होने एवं इमाम महदी के जाहिर होने के सम्बन्ध में एकान्त में बात करना चाहा। औरंगज़ेब स्वयं आन्तरिक रूप से इमाम महदी से मिलने का इच्छुक था, किन्तु शरीयत के दबाव में वह एकान्त में मिल नहीं सका। बादशाह के काज़ी शेख इस्लाम के इशारे पर कोतवाल सीदिक पौलाद द्वारा उन १२ सुन्दरसाथ को काफी यातना दी गयी, जिसकी सूचना मिलने पर श्री जी ने बहुत दु:ख माना और महाप्रलय के लिये मन बना लिया, किन्तु परब्रह्म की प्रेरणा से जागनी लीला की अवधि और

बढ़ा दी गयी।

काज़ी शेख इस्लाम ने अपनी भूल स्वीकार कर ली। यद्यपि उसने स्पष्ट कहा कि आपके द्वारा दी गई कुरआन की साक्षियों से हम यह स्वीकार करते हैं कि कियामत का समय आ गया है तथा इमाम महदी प्रकट हो गये हैं, किन्तु हम इसे अभी जाहिर नहीं कर सकते, क्योंकि ऐसा होने पर इस्लामी शरीयत का राज्य समाप्त हो जायेगा। औरंगज़ेब भी इसी डर से श्री प्राणनाथ जी के चरणों में नहीं आ सका, क्योंकि उसे डर था कि यदि उसने ऐसा कर दिया तो शरीयत को चाहने वाले मुसलमान उसे ही मरवा देंगे।

मक्का–मदीना से आये हुए वसीयतनामें तथा कालपी के मौलवियों का लिखा हुए महज़रनामा (स्वीकृति पत्र) देखकर उसे विश्वास तो हो गया था कि इमाम महदी

जाहिर हो चुके हैं, किन्तु शरीयत और भय के कारण श्री जी की शरण में आना उसके लिये सम्भव नहीं हो सका, जिसका उसे मृत्यु समय तक पश्चाताप रहा। इसके अतिरिक्त मुगल साम्राज्य के पतन का रहस्य भी उसे मालूम हो चुका था।

❖❖❖❖❖

२६. कयामत के सात निशान

सम्पूर्ण इस्लामी जगत कयामत के प्रगट होने की बाट देख रहा है। कुरआन में वर्णित शब्दों के बाह्य अर्थ लेने मात्र से वास्तविक सत्य उजागर नहीं होता। तारतम्य ज्ञान की दृष्टि से देखने पर ग्यारहवीं सदी में ही कयामत के प्रगट हो जाने की बात स्पष्ट हो जाती है। कयामत के सात निशान संक्षेप में इस प्रकार हैं।

१. आजूज माजूज का प्रगट होना।

२. दाभ–तुल–अर्ज जानवर का प्रगट होना।

३. सूरज का पश्चिम (मगरब) में उदय होना।

४. गधे के ऊपर काने दज्जाल का सवार होना।

५. ईसा रूह अल्लाह का आना।

६. इस्राफील फरिश्ते का आना।

७. इमाम महदी का प्रकट होना।

संक्षेप में इनकी व्याख्या इस प्रकार है–

आजूज दिन को तथा माजूज रात्रि को कहते हैं। दिन में मनुष्य की वृत्तियाँ १०० तरफ दौड़ती हैं, इसलिये आजूज को सौ गज का लम्बा कहा गया है। रात्रि को माजूज कहा जाता है। उसे एक गज का इसलिये माना जाता है कि रात्रि को सो जाने पर मन की वृत्तियाँ एक तरफ हो जाती हैं। जीवधारियों का यह पञ्चभौतिक शरीर ही अष्ट धातु (रस, रक्त, माँस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र, ओज) की दीवार है। प्रातः, दोपहर, तथा सायंकाल इनकी तीन फौजे हैं। आजूज–माजूज निरन्तर

सबकी उम्र का हरण कर रहे हैं। जब खुदा के हुकम से महाप्रलय होगी तो इस दुनिया में कुछ भी नहीं बचेगा, अर्थात आजूज–माजूज रूपी काल के द्वारा सांसारिक प्राणियों की उम्र रूपी दीवार को तोड़ दिया जायेगा। कुरआन के १६वें पार: आयत ९४ में आजूज–माजूज का वर्णन है।

कुरान के पार: २० आयत ८२ में दाभ–तुल–अर्ज जानवर का वर्णन है, जिसका गुह्य अर्थ इस प्रकार है। कयामत के समय में मनुष्य का चेहरा तो वैसा ही रहेगा, किन्तु उसकी प्रवृत्ति पशुओं जैसी हो जायेगी, अर्थात् उसकी छाती शेर की (कठोर) हो जायेगी। पहाड़ी बैल की तरह उसमें सबसे झगड़ने की प्रवृत्ति होगी। मुर्गे की गर्दन की तरह उसमें अकड़ने का स्वभाव होगा, अर्थात् विनम्रता का नामोनिशान भी नहीं होगा। सुअर की तरह

उसकी दृष्टि केवल गन्दगी रूपी विकारों की तरफ ही होगी। धर्म एवं परोपकार के कार्यों में वह गीदड़ की पीठ की तरह कमजोर होगा। हाथी के कान की तरह वह बुरी बातों को ही ध्यान से सुनेगा।

जब परब्रह्म का ज्ञान (तारतम्य ज्ञान) हिन्दू तन में (पूर्व) में आया, तो पश्चिम (मुसलमानों) के लिये वह अन्धेरे जैसा ही रहा। जाहिरी सूर्य का पश्चिम में उगना असम्भव है। यहाँ परमधाम के ज्ञान रूपी सूर्य की बात है, जो सबसे पहले अरब में उगा। वह पूर्व की दिशा उनके लिये हुआ। अब परमधाम का ज्ञान रूपी मारिफत का सूर्य इमाम महदी श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में हिन्दू तन में प्रकट हुआ है, इसलिये मुसलमानों के लिये वह पश्चिम दिशा (विपरीत तन) में कहा गया है। उनके लिये बिना रोशनी का सूर्य इसलिये कहा गया है कि शरीयत

के बन्धनों में रहने वाले मुसलमान हिन्दू तन में प्रकट होने वाले इमाम महदी के स्वरूप की पहचान नहीं कर सकेंगे।

निराकार को ही गधा कहा गया है, जिस पर अजाजील सवार होकर बैठा है। अजाजील के ही मन की शक्ति अबलीस (दज्जाल) है। कुन्न की यह दुनिया अजाजील की बनाई हुई है, जिसके दिल और आँखों पर अबलीस तथा अजाजील की बादशाहत है। अबलीस के वशीभूत होने के कारण मनुष्य धर्मग्रन्थों के बातिनी (गुह्य) अर्थों को समझ नहीं पाता और इमाम महदी की पहचान भी नहीं कर पाता, क्योंकि उसकी आन्तरिक आँखें नही हैं। इसी कारण उसे एक आँख से काना कहा गया है।

तफ्सीर–ए–हुसैनी भाग १ के पृष्ठ १९३ में ईसा

रूह अल्लाह के प्रकटने की बात कही गयी है। इसी प्रकार तफसीर–ए–हुसैनी भाग २ के पृष्ठ ४१ और २२० पर इस्राफील के सूर फूँकने का प्रसंग है। इमाम महदी के अन्दर ही इस्राफील होगा, ऐसा कतेब ग्रन्थों की स्पष्ट मान्यता है।

इस प्रकार कयामत के सातों निशानों की संक्षिप्त व्याख्या हुई।

❖❖❖❖❖

कालू याजल करनैनिअिन्न मअजूज मुक् सिदून।

फिल अर्जि फहल नजअलु लक खर्जन अला अन् तजअल् बैनना व बैनहुम सद्दन।।

कुरआन पार: १६ आयत ९४

व अिजा बक अल्कौलु अलैहिम अख्रज्ना लहुम् दाब्बतम् मिनल्अर्जि तुकल्लिमुहुम अन्नन्नास कानू बिआयातिना ला: यूकिनन्।

कुरआन पार: २० आयत ८२

२७. श्री पन्ना जी की बीतक

श्री प्राणनाथ जी पाँच हजार सुन्दरसाथ की संख्या के साथ श्री पन्ना जी पहुँचे। उस समय महाराज छत्रसाल जी मऊसहानिया में थे। अफगन खान के आक्रमण के कारण छत्रसाल जी के आग्रह पर श्री जी को स्वयं कुछ सुन्दरसाथ के साथ मऊ जाना पड़ा। श्री जी की कृपा दृष्टि से ही शेख अफगन की विशाल सेना के विरुद्ध असम्भव सी लगने वाली विजय छत्रसाल जी को प्राप्त हो सकी।

छत्रसाल जी ने महारानी के साथ श्री जी की पालकी को स्वयं उठाकर महल में पधराया। चौपड़े की हवेली में उन्होंने सिंहासन पर बाई जी के साथ बिठाकर

साक्षात् पूर्ण ब्रह्म के रूप में मानकर आरती उतारी और सबके सामने स्पष्ट रूप से कह दिया कि जो कोई भी इन्हें अक्षरातीत मानने में संशय करता है, वह परमधाम की ब्रह्मसृष्टि ही नहीं है। छत्रसाल जी की ऐसी निष्ठा देखकर श्री प्राणनाथ जी ने उन्हें अपने हुक्म की शक्ति दे दी तथा स्वयं माथे पर तिलक करके "महाराजा" घोषित कर दिया। यह श्री प्राणनाथ जी की कृपा का ही फल था कि ५२ लड़ाइयों में वे हमेशा ही विजयी रहे।

महाराजा छत्रसाल जी के चाचा बलदीवान सहित कुछ लोगों के मन में श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप के सम्बन्ध में संशय था, जिसे दूर करने के लिये कुरआन और वेद–शास्त्रों के विद्वान बुलाये गये। महोबा के काज़ी अब्दुल रसूल से श्री जी की कुरआन पर चर्चा हुई। पाँच तरह की पैदाइश के प्रश्न के सम्बन्ध में काज़ी ने हार

मानकर श्री प्राणनाथ जी के चरणों में प्रणाम किया और कुरआन को सिर पर रखकर यह कसम खाते हुए कहा कि ये श्री प्राणनाथ जी ही कियामत के समय में आने वाले "आखरूल जमां इमाम महदी" (खुदा) हैं। इसी प्रकार सुप्रसिद्ध विद्वान बद्रीदास जी ने भी शास्त्रार्थ में हार मानकर उन्हें "श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप" माना।

श्री प्राणनाथ जी ने महाराजा छत्रसाल जी को यह आशीर्वाद दिया कि आज प्रात: से सायं काल तक अपने घोड़े से राज्य के जितने भाग में दौड़ लगा लोगे, वहाँ तक की धरती हीरा उगलने लगेगी। ऐसी अलौकिक चमत्कार की घटना श्री पन्ना जी में आज भी दिखायी देती है। लगभग दस वर्ष तक श्री प्राणनाथ जी की कृपा से पन्ना जी में परमधाम का आनन्द बरसता रहा। सबने

यही माना कि हमारे मध्य में परब्रह्म की लीला चल रही है। आज भी श्री पन्ना जी के गुम्मट मन्दिर में श्री महामति जी ध्यानावस्था में विराजमान हैं।

❖❖❖❖❖

२८. निजानन्द दर्शन की विशेषतायें

यद्यपि संसार के कई पन्थों में अध्यात्म तत्व के सम्बन्ध में तर्क–वितर्क का कोई स्थान नहीं है , किन्तु भारत में तो शास्त्रार्थ की परम्परा रही है और अपने को सत्य मार्ग का अनुगामी सिद्ध करने के लिये प्रत्येक मत को अभिव्यक्ति की पूरी स्वतन्त्रता दी गयी है।

किन्तु हमें यह मुक्त कण्ठ से स्वीकार करना पड़ेगा कि यदि सभी मुख्य पन्थों के आचार्यों को एक मंच पर उपस्थित किया जाये और उनके दार्शनिक तथ्यों को वेदानुकूल प्रस्तुत करने के लिए कहा जाये, तो उनकी दार्शनिक झिक–झिक को सुनकर शायद ही किसी जिज्ञासु को शान्ति प्राप्त हो सकेगी। प्राय: प्रत्येक मत के

अनुयायी की यही मानसिकता होती है कि वह एकमात्र अपनी ही मान्यताओं को सत्य सिद्ध करे तथा दूसरों को वेद–विरूद्ध। लेकिन इस प्रकार की संकीर्णता समाज को सत्य धर्म का अनुगामी नहीं बना सकती।

तारतम्य ज्ञान के प्रकाश में सारे विवादों का समाधान हो जाता है। ब्रह्म की सत्ता कहाँ है, स्वरूप कहाँ है, और कैसा है? साकार क्या है और निराकार क्या है तथा कैसा है? क्या ब्रह्म का स्वरूप ऐसा ही है या इन दोनों से भिन्न? क्या परब्रह्म द्वैत है या अद्वैत या त्रैत है या विशिष्टाद्वैत या इनसे भिन्न? प्रकृति का स्वरूप क्या है? महाप्रलय के पश्चात् और सृष्टि के पूर्व इस प्रकृति की स्थिति क्या होती है? अखण्ड मुक्ति एवं ब्रह्म–साक्षात्कार के लिये क्या सभी उपासना पद्धतियाँ वेदानुकुल हैं या कुछ विशिष्ट?

श्री प्राणनाथ जी की वाणी से अदभुत "निजानन्द दर्शन" में इन सभी विवादास्पद मतों का एकीकरण प्रस्तुत है। आवश्यकता है, केवल सत्य के अन्वेषकों की, जिनके अन्दर निष्पक्ष बुद्धि से सत्य को ग्रहण करने एवं असत्य के त्याग की दृढ़ मानसिकता हो, अज्ञानता के अन्धकार में भटकने वाली मानवता को ब्रह्मज्ञान की ज्योति से आनन्द के मार्ग पर ले जाने की अमिट प्यास हो।

❖❖❖❖❖

२९. साम्प्रदायिक सौहार्द के लिये क्या करें?

धर्म का मूल उद्देश्य है, मनुष्य को लौकिक एवं पारलौकिक सुख की प्राप्ति कराना। सत्य ही धर्म है और धर्म का स्वरूप शाश्वत होता है। शाश्वत शान्ति का मूल भी धर्म ही है, किन्तु यह कैसी विडम्बना है कि धर्म की ओट में आज सारा विश्व साम्प्रदायिक विद्वेष की अग्नि में जल रहा है। भारतीय संस्कृति तो सम्पूर्ण द्युलोक , अन्तरिक्ष, एवं पृथ्वी पर शान्ति का उद्घोष करती है, किन्तु स्वयं भारत में हिन्दू धर्म के अन्दर प्रचलित १००० सम्प्रदाय वैचारिक संघर्षों और द्वेष से जूझते नजर आ रहे हैं। प्रश्न यह है कि सम्पूर्ण विश्व को शान्ति का पाठ पढ़ाने वाला भारत आज क्या करे?

मनुस्मृति का कथन है– "धन और लौकिक सुखों में आसक्ति न रखने वालों को ही धर्म के वास्तविक स्वरूप का बोध होता है।" अध्यात्म का वास्तविक स्वरूप मनुष्य को लोकेषणा (प्रतिष्ठा की इच्छा), वित्तेषणा (धन की इच्छा), तथा दारेषणा (परिवार या शिष्यों का अनावश्यक मोह) से दूर करता है, एवं वीतराग जीवन की प्रेरणा देता है। अपमान को अमृत एवं सम्मान को विष समझना तो अध्यात्म जगत की प्राथमिकता है, किन्तु वर्तमान समय का धार्मिक दृश्य हमारे आध्यात्मिक पतन की करुण गाथा कह रहा है। प्रत्येक सम्प्रदाय का अग्रगण्य व्यक्ति तीनों प्रकार की ऐषणाओं से ग्रसित होने के कारण जड़–पूजा एवं बहुदेव–उपासना को महत्व दे रहा है, जिसका दुष्परिणाम यह है कि समाज में धार्मिक ज्ञान की कमी

एवं आलस्य–प्रमाद में बढ़ोत्तरी होती जा रही है। तमोगुण एवं अज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि आध्यात्मिक पतन का संकेत देती है। दुर्भाग्यवश, प्रसिद्ध–प्रसिद्ध धर्म–स्थलों में यही हो रहा है।

यदि संसार के लोग श्री प्राणनाथ जी की अमृतमयी वाणी के प्रकाश में वेदादि आर्ष ग्रन्थों की साक्षी लेकर एक शाश्वत् सत्य सिद्धान्त का अनुसरण करें, अपने साम्प्रदायिक दुराग्रहों को छोड़ें, तथा अपनी तामसिक प्रवृत्तियों को समाप्त कर दें, तो निश्चय ही सारे विश्व में स्नेह एवं शान्ति का साम्राज्य स्थापित हो जायेगा।

❖❖❖❖❖

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।

वनस्पतय: शान्तिर्विश्वेदेवा: शान्तिर्ब्रह्म शान्तिस्सर्वं शान्तिश्शान्तिरेव शान्ति: सा मा शान्तिरेधि।

यजुर्वेद ३६/१७

अर्थ कामेष्वसक्तानां धर्मज्ञानं विधीयते। मनुस्मृति

३०. विश्व को निजानन्द दर्शन की देन

वर्तमान समय में सम्पूर्ण विश्व में हिन्दू , मुस्लिम, क्रिश्चियन, यहूदी आदि अनेक मत हैं और सबके धर्मग्रन्थ अलग–अलग हैं। इनके अनुयायियों की भाषा और वेश–भूषा भी प्राय: अलग–अलग है। ऐसी परिस्थितियों में मानव–मानव के बीच ईर्ष्या, द्वेष, तथा वैमनस्य की खाई होना स्वाभाविक है। श्री प्राणनाथ जी की वाणी ने संसार को ऐसा आध्यात्मिक दर्शन दिया है, जिसकी छत्रछाया में संसार के सभी मत परस्पर प्रेमपूर्वक रह सकते हैं। आवश्यकता है केवल इस अलौकिक ज्ञान के प्रसार की।

इसी प्रकार हिन्दू धर्म के अन्दर भी १००० मतों में वैचारिक भिन्नता के कारण परस्पर सौहार्द का वातावरण

नहीं है। सभी सम्प्रदायों की आपसी खेंचा–खेंच को दूर करने के लिये प्राणनाथ जी के अलौकिक तारतम्य ज्ञान की आवश्यकता है, जिसके उज्ज्वल प्रकाश में पौराणिक, सनातनी, जैन, बौद्ध, शाक्त आदि मत यथार्थ सत्य की प्राप्ति कर सकते हैं। आवश्यकता है केवल निष्पक्ष हृदय से सत्य को ग्रहण करने की प्रवृत्ति की।

संसार में प्राय: सभी मतों के अनुयायी यही चाहते हैं कि केवल उनका ही मत फैले। इसी संकुचित विचारधारा ने जब भी उग्र रूप लिया, तो संसार में करोड़ों निरीह मनुष्यों को प्राणों से हाथ धोना पड़ा है। प्रेम की शिक्षा देने वाले धर्म की ओट में ही यह खूनी खेल खेला गया है। निजानन्द दर्शन में वह शक्ति है, जो संसार के सभी मतों का एकीकरण करके सबको एक सत्य मार्ग का अनुयायी बनाकर शान्ति का साम्राज्य स्थापित कर

सकता है।

"मैं कौन हूँ, कहाँ से आया हूँ? परब्रह्म का धाम, स्वरूप, तथा लीला क्या है? जगत् महाप्रलय में कहाँ चला जाता है?" ये अध्यात्म जगत के मूल प्रश्न हैं जिनका यथार्थ उत्तर खोजने में संसार के मनीषी लगे रहे हैं, लेकिन यह निश्चित है कि तारतम्य ज्ञान के प्रकाश से रहित होकर इन प्रश्नों का समाधान कोई भी व्यक्ति नहीं कर सकता, भले ही वह संसार में ज्ञान के सर्वोच्च शिखर पर क्यों न स्थित हो।

यद्यपि संसार के सभी अध्यात्मवादी यह बात मुक्त कण्ठ से स्वीकार करते हैं कि असंख्य ब्रह्माण्डों का स्वामी एक ही परब्रह्म (परमात्मा) है और उसकी प्राप्ति भी चेतना के शुद्ध धरातल पर ही हो सकती है। फिर भी, परब्रह्म की उपासना के लिये शरीर, मन, वाणी, बुद्धि

आदि के आधार पर सैकड़ों उपासना पद्धतियाँ प्रचलित हैं, जो प्रकृति से परे उस परब्रह्म का साक्षात्कार कराने में असमर्थ हैं। श्री प्राणनाथ जी की वाणी के अनुशीलन से परब्रह्म के साक्षात्कार का वह मार्ग प्रशस्त हो जाता है, जो वेदादि सभी आर्ष ग्रन्थों का परम ध्येय रहा है।

संसार के सभी धर्मग्रन्थों में अध्यात्म के गहन रहस्य छिपे पड़े हैं, किन्तु आज का मानव उन रहस्यों से अनजान है। अथर्ववेद के अन्दर कई ऐसे प्रश्न हैं, जिनका उत्तर मानवीय बुद्धि नहीं दे सकती। परब्रह्म की कृपा एवं तारतम्य ज्ञान के आलोक में ही उन प्रश्नों का समाधान निहित है। इसी प्रकार कुरआन के "हरुफ–ए–मुक्तेआत" भी हैं, जिनका उत्तर खोजने के लिये हमें श्री प्राणनाथ जी की वाणी के शरणागत होना पड़ेगा।

यदि संसार के लोग निजानन्द दर्शन के शाश्वत सत्य

को अंगीकार कर लें, तो यह निशिचत है कि संकीर्ण विचारधाराओं के कारण उत्पन्न होने वाली वर्गवाद, क्षेत्रवाद, व्यकितवाद, तथा उग्रवाद की आँधी पूर्णतया शान्त हो जायेगी तथा उसकी जगह प्रेम, शान्ति, एवं सौहार्द की शीतल, मन्द, एवं सुगन्धित वायु बहने लगेगी, जिसके आनन्द में संसार का प्रत्येक प्राणी विभोर हो जायेगा।

।। इति पूर्णम ।।